झारखण्ड उच्च न्यायालय, रांची

अग्रिम जमानत आवेदन- 10671/2023

मुकेश मित्तल उम्र लगभग 65 वर्ष, पिता श्री बाबू लाल मित्तल। निवास ई-265, नारायणा विहार, डाकघर+थाना - नारायणा, जिला एवं राज्य नई दिल्ली

..... **याचिकाकर्ता**

बनाम

यूनियन ऑफ़ इंडिया प्रवर्तन निदेशालय के माध्यम से, जिसका प्रतिनिधित्व उसके सहायक निदेशक (पी.एम.एल.ए) द्वारा किया जाता है

..... **विपक्ष**

कोरम: माननीय श्रीमान न्यायमूर्ति सुजीत नारायण प्रसाद

याचिकाकर्ता की ओर से : श्री इंद्रजीत सिन्हा, अधिवक्ता
श्री शैलेश पोद्दार, अधिवक्ता

विपक्ष की ओर से : श्री अमित कुमार दास, अधिवक्ता
श्री सौरव कुमार, अधिवक्ता

सी.ए.वी. 02 फरवरी, 2024 को 16/02/2024 को घोषित

1. यह आवेदन दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 438 सहपठित 440 के तहत दायर किया गया है, जिसमें ईसीआईआर केस संख्या 2/2023 में अग्रिम जमानत देने की प्रार्थना की गई है, जो ईसीआईआर-आरएनजेडओ/16/2020 सहपठित इसके दिनांक 05.04.2023 के परिशिष्ट (आर्थिक अपराध शाखा, दिल्ली में आईपीसी की धाराओं 120बी, 420, 471, 473, 476 और 484 के तहत पंजीकृत एफआईआर संख्या 22/2023 से उत्पन्न) से उत्पन्न हुआ है, जिसमें धन शोधन निवारण अधिनियम, 2002 की धारा 3 सहपठित धारा 70 के तहत किए गए अपराधों का आरोप लगाया गया है, जिसे आगे अधिनियम, 2002 के रूप में संदर्भित किया जाएगा।
2. वर्तमान ईसीआईआर/शिकायत में लगाए गए आरोपों के अनुसार अभियोजन पक्ष की कहानी संक्षेप में इस प्रकार है:

ईसीआईआर संख्या ईसीआईआर/आरएनएसजेडओ/16/2020 को 17.09.2020 को दर्ज किया गया, जो एसीबी जमशेदपुर द्वारा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7(ए) (2018 तक संशोधित) के तहत दर्ज एफआईआर संख्या 13/2019 दिनांक 13.11.2019 और एसीबी द्वारा (i) सुरेश प्रसाद वर्मा और आलोक

रंजन के खिलाफ पीसी अधिनियम, 2018 की धारा 7 (बी) और आईपीसी की धारा 120 बी और 201 के तहत पीएमएलए, 2002 के प्रावधानों के तहत अपराध की जांच के लिए दायर किए गए आरोप पत्र के आधार पर दर्ज किया गया था, क्योंकि आईपीसी की धारा 120 बी, 1860 और पीसी अधिनियम, 2018 की धारा 7 (बी) धन शोधन निवारण अधिनियम के भाग-ए, पैराग्राफ 1 के तहत अनुसूचित अपराध हैं। अधिनियम (पीएमएलए), 2002

वीरेंद्र कुमार राम और उनके करीबी सहयोगियों पर जांच के दौरान, भारत भर में विभिन्न स्थानों पर कई तलाशी ली गई और यह पाया गया कि झारखंड के ग्रामीण कार्य विभाग के मुख्य अभियंता वीरेंद्र कुमार राम द्वारा निविदाओं के आवंटन के बदले कमीशन/रिश्वत के रूप में अर्जित अपराध की आय का एक हिस्सा दिल्ली स्थित सीए मुकेश मित्तल (वर्तमान याचिकाकर्ता) द्वारा मुकेश मित्तल के कर्मचारियों/रिश्तेदारों के बैंक खातों की मदद से वीरेंद्र कुमार राम के परिवार के सदस्यों के बैंक खातों में भेजा जा रहा था।

यह भी आरोप लगाया गया है कि वीरेंद्र कुमार राम वर्तमान याचिकाकर्ता को नकद राशि देते थे, जो प्रविष्टि प्रदाताओं की मदद से अपने कर्मचारियों और रिश्तेदारों के बैंक खातों में प्रविष्टियां करते थे और फिर वर्तमान याचिकाकर्ता द्वारा ऐसी धनराशि राजकुमारी (वीरेंद्र राम की पत्नी) और श्री गेंदा राम (श्री वी के राम के पिता) के बैंक खातों में स्थानांतरित कर दी जाती थी।

इसके अलावा, यह भी आरोप है कि जाली दस्तावेजों के आधार पर (दिल्ली में) खोले गए कुछ बैंक खातों का भी इस्तेमाल इस तरह के फंड के लेन-देन में किया जा रहा था। इसलिए, इससे संबंधित जानकारी पीएमएलए की धारा 66(2) के तहत दिल्ली पुलिस के साथ साझा की गई।

इसके अलावा, पीएमएलए, 2002 की धारा 66(2) के तहत पुलिस आयुक्त, दिल्ली, पुलिस मुख्यालय को साझा की गई जानकारी के आधार पर, आर्थिक अपराध शाखा (ईओडब्ल्यू), दिल्ली द्वारा 03.03.2023 को (i) श्री वीरेंद्र कुमार राम, (ii) मुकेश मित्तल (वर्तमान याचिकाकर्ता), और (iii) अज्ञात अन्य के खिलाफ आईपीसी, 1860 की धारा 419, 420, 465, 466, 468, 471, 473, 474, 476, 484 और 120 बी और निर्दिष्ट बैंक नोट (देयताओं की समाप्ति) अधिनियम, 2017 की धारा 7 और 5 के तहत एक एफआईआर संख्या 22/2023 दर्ज की गई थी।

जांच से सामने आए अतिरिक्त तथ्यों के आलोक में, ईओडब्ल्यू, दिल्ली द्वारा दर्ज एफ.आई.आर संख्या 22/2023 को वर्तमान ई.सी.आई.आर संख्या आर.एन.एस.जेड.ओ/16/2020 की जांच के साथ मिला दिया गया। तदनुसार, 05.04.2023 को एक परिशिष्ट जारी किया गया और उसी परिशिष्ट के

अनुसार,एफ,आई,आर संख्या - 22/2023 को वर्तमान ई.सी.आई.आर संख्या आर.एन.एस.जेड.ओ/16/2020 की जांच के साथ मिला दिया गया।

वर्तमान याचिकाकर्ता मुकेश मित्तल के खिलाफ पीएमएलए, 2002 की धारा 45 के तहत एक पूरक अभियोजन शिकायत विद्वान विशेष न्यायालय (पीएमएलए), रांची के समक्ष 20.08.2023 को दायर की गई है और इसका संज्ञान 22.08.2023 को लिया गया है। इसलिए, तत्काल अग्रिम जमानत आवेदन दायर किया गया है।

<u>याचिकाकर्ता के विद्वान वकील की ओर से तर्क:</u>

3. याचिकाकर्ता के विद्वान वकील श्री इंद्रजीत सिन्हा ने अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित आधारों पर तर्क दिया है:
   I. जांच पूरी हो चुकी है और इस प्रकार, यह अधिनियम, 2002 की धारा 19(1) के चरण में नहीं है।
   II. अधिनियम, 2002 की धारा 19(1) प्रवर्तन निदेशालय को किसी भी व्यक्ति को, जो धन शोधन के उद्देश्य से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अपराध करने वाला कहा जाता है, गिरफ्तार करने की शक्ति और अधिकारिता प्रदान करती है, ऐसी गिरफ्तारी का कारण बताते हुए उसे गिरफ्तार किया जाना है।
   III. इस मामले में, प्रस्तुत आरोप पत्र के आधार पर जांच पहले ही पूरी हो चुकी है, इस प्रकार, धारा 19(1) का चरण पहले ही पार हो चुका है और इसलिए, याचिकाकर्ता को हिरासत में लेने की कोई आवश्यकता नहीं है और मामले के इस दृष्टिकोण से, गिरफ्तारी-पूर्व जमानत देने के लिए याचिकाकर्ता की प्रार्थना को स्वीकार किया जाना चाहिए था।
   IV. चूंकि प्रारंभिक जांच के समापन के बाद ईसीआईआर पहले ही प्रस्तुत की जा चुकी है, इसलिए अब प्रवर्तन निदेशालय के पास अधिनियम, 2002 की धारा 45(1)(i)(ii) के तहत पूर्व गिरफ्तारी जमानत देने का विरोध करने का कोई अवसर नहीं है।
   V. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **सतेंद्र कुमार अंतिल बनाम सीबीआई एवं अन्य, (2022) 10 एससीसी 51** में दिए गए निर्णय का संदर्भ भी इस तथ्य की पृष्ठभूमि पर दिया गया है कि जब याचिकाकर्ता ने पहले ही जांच में सहयोग किया है जिसके आधार पर ईसीआईआर तैयार की गई है और संबंधित अदालत को प्रस्तुत की गई है तो याचिकाकर्ता की इस स्तर पर गिरफ्तारी क्यों की गई।
4. जहां तक गुण-दोष के मुद्दे का सवाल है, आधार यह लिया गया है कि याचिकाकर्ता को झारखंड राज्य के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र में दर्ज प्रथम सूचना रिपोर्ट के संबंध में

हिरासत में लिया गया है, जिसमें किसी पूर्वनिर्धारित अपराध के किए जाने का कोई आरोप नहीं है, बल्कि आर्थिक अपराध के दिल्ली में दर्ज मामले के आधार पर, याचिकाकर्ता के दिल्ली के क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र में किए गए आचरण को तत्काल प्राथमिकी से जोड़ा जा रहा है और उसी के आधार पर याचिकाकर्ता को तत्काल मामले में फंसाया गया है।

5. याचिकाकर्ता चार्टर्ड अकाउंटेंट का पेशा रखता है और उसके पेशेवर काम के मामले में केवल इसलिए कि उसने वित्तीय सुझाव दिया है, याचिकाकर्ता को इस मामले में अपराध की आड़ में फंसाया गया है।
6. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने उपरोक्त आधार पर दलील दी है कि पूर्व गिरफ्तारी जमानत की प्रार्थना पर विचार करते समय विद्वान न्यायालय को मामले के सभी कानूनी और तथ्यात्मक पहलुओं पर विचार करना चाहिए था, लेकिन ऐसा न करने से गंभीर त्रुटि हुई है।
7. मामले के उपरोक्त दृष्टिकोण के अनुसार आगे दलील दी गई है कि यह एक उपयुक्त मामला है, जहां याचिकाकर्ता को गिरफ्तारी पूर्व जमानत का लाभ दिया जाना चाहिए।

<u>प्रतिवादी के विद्वान वकील की ओर से तर्क:</u>

8. जबकि दूसरी ओर, प्रतिवादी-प्रवर्तन निदेशालय के विद्वान वकील श्री अमित कुमार दास ने याचिकाकर्ता के विद्वान वकील श्री इंद्रजीत सिन्हा द्वारा उल्लिखित तथ्य और कानून के आधार पर उक्त प्रस्तुतिकरण/आधार का गंभीरता से विरोध किया है।
9. यह प्रस्तुत किया गया है कि याचिकाकर्ता की ओर से यह आधार लेना गलत है कि धारा 19(1) का चरण केवल इसलिए पार हो गया है क्योंकि ईसीआईआर तैयार और प्रस्तुत की गई है। यह प्रस्तुत किया गया है कि ईसीआईआर प्रस्तुत करना सीआरपीसी की धारा 173(2) के प्रावधान के मद्देनजर आरोप पत्र प्रस्तुत करना नहीं कहा जा सकता है, बल्कि ईसीआईआर के आधार पर, आपराधिक अधिकार क्षेत्र के संबंधित सक्षम न्यायालय द्वारा शिकायत दर्ज की जानी चाहिए और इसे शिकायत मामले के माध्यम से निपटाया जाना चाहिए, जहां सीआरपीसी की धारा 173(2) के प्रावधान के मद्देनजर आरोप पत्र प्रस्तुत करने की कोई आवश्यकता नहीं है।
10. याचिकाकर्ता की ओर से धारा 19(1) के चरण को पार करने के बारे में तर्क दिया गया है, जो धारा 19(1) की बिल्कुल गलत व्याख्या है। श्री दास के अनुसार, धारा 19(1) संबंधित व्यक्ति को गिरफ्तार करने की शक्ति और अधिकारिता प्रदान करती है, जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अपराध में शामिल पाया गया है।
11. अधिनियम, 2002 की धारा 19(1) के अंतर्गत किसी भी चरण का संदर्भ नहीं है, बल्कि केवल गिरफ्तारी का संदर्भ है, जो उस व्यक्ति को गिरफ्तार करने से पहले पूरी

की जाने वाली आवश्यकता को बताता है जो कि संबंधित अपराध में शामिल पाया गया है।

12. जहां तक तर्क धारा 45(1)(i)(ii) के प्रावधान से संबंधित है, जिसके तहत नियमित या गिरफ्तारी-पूर्व जमानत का लाभ देने से पहले प्रवर्तन निदेशालय को अवसर दिया जाना है, उसे केवल इसलिए समाप्त नहीं कहा जा सकता कि ईसीआईआर प्रस्तुत कर दी गई है, बल्कि उपरोक्त प्रावधान यह स्पष्ट करता है कि न्यायालय द्वारा आदेश पारित करने से पहले, चाहे नियमित जमानत या अग्रिम जमानत के लिए प्रार्थना को अनुमति देकर, प्रवर्तन निदेशालय को विरोध करने का अवसर दिया जाना है और यदि सक्षम न्यायालय के पास यह मानने का कारण है कि जो आरोप लगाया गया है वह प्रथम दृष्टया असत्य है, तो उक्त प्रार्थना को अनुमति दी जा सकती है।

13. यह दलील दी गई है कि अधिनियम, 2002 की धारा 45 के तहत जमानत के लिए दोहरी शर्त रखी जानी चाहिए, यानी अदालत को इस बात से संतुष्ट होना होगा कि यह मानने के लिए उचित आधार हैं कि आरोपी ऐसे अपराध का दोषी नहीं है और जमानत पर रहते हुए उसके अपराध करने की संभावना नहीं है।

14. प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता श्री दास ने वर्तमान याचिकाकर्ता के खिलाफ दिल्ली में की गई प्रारंभिक जांच के दौरान लगाए गए आरोप का हवाला देते हुए दलील दी है कि इसमें धन शोधन का मामला दर्ज किया गया है, जिसमें याचिकाकर्ता की सह-आरोपी वीरेंद्र कुमार राम द्वारा अर्जित धन शोधन में गंभीर संलिप्तता पाई गई है।

15. प्रवर्तन निदेशालय के विद्वान वकील श्री दास ने याचिकाकर्ता के खिलाफ आए आरोप को ईसीआईआर में संदर्भित किया है जिसे पेपर बुक के साथ संलग्न किया गया है।

16. प्रतिवादी-प्रवर्तन निदेशालय के विद्वान वकील ने उपरोक्त आधार पर दलील दी है कि यह उपयुक्त मामला नहीं है, जिसमें गिरफ्तारी-पूर्व जमानत की प्रार्थना मंजूर की जाए।

<u>विश्लेषण:</u>

17. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं की दलीलें सुनी हैं तथा ई.सी.आई.आर. पर विचार किया है।

18. यह न्यायालय पक्षों की ओर से प्रस्तुत तर्क की सराहना करने से पहले, अधिनियम, 2002 के तहत निहित कानून के कुछ प्रावधानों पर इसके उद्देश्य और इरादे के साथ चर्चा करना उचित और उचित समझता है।

यह अधिनियम धन शोधन को रोकने, अपराध की आय की कुर्की, न्यायनिर्णयन और जब्ती के लिए एक व्यापक कानून बनाने की तत्काल आवश्यकता को पूरा करने के लिए बनाया गया था, जिसमें इसे केंद्र सरकार को सौंपना, धन शोधन से निपटने के उपायों के समन्वय के लिए एजेंसियों और तंत्रों की स्थापना

करना और अपराध की आय से जुड़ी प्रक्रिया या गतिविधि में शामिल व्यक्तियों पर मुकदमा चलाना शामिल है।

नारकोटिक ड्रग्स और साइकोट्रोपिक पदार्थों के अवैध व्यापार के खिलाफ संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन में इन मुद्दों पर गहन चर्चा की गई, 1989 में बेसल में सिद्धांतों का विवरण, 14 से 16 जुलाई, 1989 को पेरिस में आयोजित सात प्रमुख औद्योगिक राष्ट्रों के शिखर सम्मेलन में स्थापित FATF, 23.2.1990 के संकल्प संख्या S-17/2 द्वारा संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा अपनाई गई राजनीतिक घोषणा और कार्रवाई का महान कार्यक्रम, 8 से 10 जून, 1998 को विश्व ड्रग समस्या का मुकाबला करने के लिए संयुक्त राष्ट्र द्वारा विशेष सत्र में राज्य दलों से एक व्यापक कानून बनाने का आग्रह किया गया। यह बिल के साथ प्रस्तुत किए गए उद्देश्यों और कारणों के विवरण से स्पष्ट है, जो 2002 का अधिनियम बन गया। यह इस प्रकार है:

इंट्रोडक्शन

मनी-लॉन्ड्रिंग न केवल देशों की वित्तीय प्रणालियों के लिए बल्कि उनकी अखंडता और संप्रभुता के लिए भी एक गंभीर खतरा है। ऐसे खतरों को दूर करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय समुदाय ने कुछ पहल की हैं। यह महसूस किया गया है कि मनी-लॉन्ड्रिंग और इससे जुड़ी गतिविधियों को रोकने के लिए एक व्यापक कानून की तत्काल आवश्यकता है। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए संसद में मनी-लॉन्ड्रिंग निवारण विधेयक, 1998 पेश किया गया। विधेयक को वित्त संबंधी स्थायी समिति को भेजा गया, जिसने 4 मार्च, 1999 को अपनी रिपोर्ट लोकसभा में प्रस्तुत की। केंद्र सरकार ने स्थायी समिति की सिफारिशों को मोटे तौर पर स्वीकार कर लिया और उन्हें कुछ अन्य वांछित परिवर्तनों के साथ उक्त विधेयक में शामिल कर लिया।

उद्देश्यों और कारणों का विवरण

दुनिया भर में यह महसूस किया जा रहा है कि मनी लॉन्ड्रिंग न केवल देशों की वित्तीय प्रणालियों के लिए बल्कि उनकी अखंडता और संप्रभुता के लिए भी गंभीर खतरा है। इस तरह के खतरे को कम करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय समुदाय द्वारा उठाए गए कुछ कदम नीचे दिए गए हैं:–

1) **मादक द्रव्यों और मन:प्रभावी पदार्थों के अवैध व्यापार के विरुद्ध संयुक्त राष्ट्र अभिसमय, जिसका भारत भी एक पक्ष है, मादक द्रव्य अपराधों और अन्य संबंधित गतिविधियों से प्राप्त आय के शोधन को रोकने और ऐसे अपराधों से प्राप्त आय को जब्त करने का आह्वान करता है।**
2) **1989 में घोषित बेसल सिद्धांतों के वक्तव्य में बुनियादी नीतियों और प्रक्रियाओं की रूपरेखा दी गई थी, जिनका बैंकों को मनी लॉन्ड्रिंग की**

समस्या से निपटने में कानून प्रवर्तन एजेंसियों की सहायता के लिए पालन करना चाहिए।

3) **मनी लॉन्ड्रिंग की समस्या की जांच के लिए 14 से 16 जुलाई, 1989 तक पेरिस में आयोजित सात प्रमुख औद्योगिक देशों के शिखर सम्मेलन में स्थापित वित्तीय कार्रवाई कार्य बल ने चालीस सिफारिशें की हैं, जो मनी लॉन्ड्रिंग की समस्या से निपटने के लिए व्यापक कानून बनाने के लिए आधार सामग्री प्रदान करती हैं। सिफारिशों को विभिन्न शीर्षकों के अंतर्गत वर्गीकृत किया गया था। कुछ महत्वपूर्ण शीर्षक हैं-**
   - i) **गंभीर अपराधों के माध्यम से किए गए धन शोधन को आपराधिक अपराध घोषित करना;**
   - ii) **रिपोर्ट योग्य लेनदेन के संबंध में वित्तीय संस्थानों द्वारा प्रकटीकरण के तौर-तरीके तय करना;**
   - iii) **अपराध की आय की जब्ती;**
   - iv) **धन शोधन को प्रत्यर्पणीय अपराध घोषित करना; तथा**
   - v) **धन शोधन की जांच में अंतर्राष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा देना।**

4) **संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा 23 फरवरी, 1990 को अपने संकल्प संख्या एस-17/2 द्वारा अपनाई गई राजनीतिक घोषणा और वैश्विक कार्य योजना में अन्य बातों के साथ-साथ सदस्य देशों से आह्वान किया गया है कि वे वित्तीय संस्थाओं को नशीली दवाओं से संबंधित धन शोधन के लिए इस्तेमाल किए जाने से रोकने के लिए तंत्र विकसित करें और इस तरह के शोधन को रोकने के लिए कानून बनाएं।**

5) **संयुक्त राष्ट्र ने 8 से 10 जून, 1998 को संपन्न विश्व ड्रग समस्या से निपटने के लिए विशेष सत्र में मनी लॉन्ड्रिंग से निपटने की आवश्यकता के बारे में एक और घोषणा की है। भारत इस घोषणा पर हस्ताक्षरकर्ता है।**

19. इस प्रकार यह स्पष्ट है कि अधिनियम 2002 को धन शोधन को रोकने, अपराध की आय को कुर्क करने, धन शोधन से निपटने के लिए न्यायनिर्णयन और जब्ती तथा अपराध की आय से जुड़ी प्रक्रिया या गतिविधि में लिप्त व्यक्तियों पर मुकदमा चलाने के लिए अन्य बातों के साथ-साथ एक व्यापक कानून बनाने की तत्काल आवश्यकता को पूरा करने के लिए अधिनियमित किया गया था।

20. इसमें अधिनियम, 2002 की धारा 2(1)(यू) के तहत प्रदत्त "अपराध की आय" की परिभाषा का संदर्भ देने की आवश्यकता है, जो इस प्रकार है:

> "2(यू) "अपराध की आय" का अर्थ है किसी व्यक्ति द्वारा अनुसूचित अपराध से संबंधित आपराधिक गतिविधि के परिणामस्वरूप प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त की गई संपत्ति

या किसी ऐसी संपत्ति का मूल्य 3[या जहां ऐसी संपत्ति देश के बाहर ली गई है या रखी गई है, तो देश के भीतर रखी गई संपत्ति के मूल्य के बराबर] 4[या विदेश में];

[स्पष्टीकरण.-संदेह दूर करने के लिए, यह स्पष्ट किया जाता है कि "अपराध की आय" में न केवल अनुसूचित अपराध से प्राप्त या प्राप्त संपत्ति शामिल है, बल्कि कोई भी संपत्ति भी शामिल है जो अनुसूचित अपराध से संबंधित किसी आपराधिक गतिविधि के परिणामस्वरूप प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त या प्राप्त की जा सकती है;]"

21. उपर्युक्त प्रावधान से यह स्पष्ट है कि "अपराध की आय" का अर्थ है किसी व्यक्ति द्वारा किसी अनुसूचित अपराध से संबंधित आपराधिक गतिविधि के परिणामस्वरूप प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त की गई संपत्ति या ऐसी किसी संपत्ति का मूल्य या जहां ऐसी संपत्ति देश के बाहर ली गई या रखी गई है, तो देश के भीतर या विदेश में रखी गई संपत्ति के बराबर मूल्य की हो।

स्पष्टीकरण में यह उल्लेख किया गया है कि संदेहों को दूर करने के लिए यह स्पष्ट किया जाता है कि "अपराध की आय" में न केवल अनुसूचित अपराध से प्राप्त या प्राप्त संपत्ति शामिल है, बल्कि ऐसी कोई भी संपत्ति भी शामिल है जो अनुसूचित अपराध से संबंधित किसी आपराधिक गतिविधि के परिणामस्वरूप प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त या प्राप्त की गई हो।

उपरोक्त स्पष्टीकरण 2019 के अधिनियम 23 के माध्यम से क़ानून की पुस्तक में डाला गया है।

22. इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि धारा 2(1)(यू) के अंतर्गत स्पष्टीकरण देने का कारण यह है कि क्या धारा 2(1)(यू) के मूल प्रावधान के अनुसार, किसी व्यक्ति द्वारा अनुसूचित अपराध से संबंधित आपराधिक गतिविधि के परिणामस्वरूप प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त की गई संपत्ति या ऐसी किसी संपत्ति का मूल्य या जहां ऐसी संपत्ति देश के बाहर ली गई या रखी गई हो, लेकिन स्पष्टीकरण के माध्यम से अपराध की आय को न केवल अनुसूचित अपराध से प्राप्त या प्राप्त की गई संपत्ति बल्कि अनुसूचित अपराध से संबंधित किसी आपराधिक गतिविधि के परिणामस्वरूप प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त की गई संपत्ति को भी शामिल करके व्यापक निहितार्थ दिया गया है।

23. धारा 2(1)(v) के तहत “संपत्ति” को परिभाषित किया गया है, जिसका अर्थ है हर प्रकार की संपत्ति या परिसंपत्ति, चाहे वह भौतिक हो या अमूर्त, चल या अचल, मूर्त या अमूर्त और इसमें ऐसी संपत्ति या परिसंपत्तियों के स्वामित्व या उसमें रुचि को प्रमाणित करने वाले कार्य और साधन शामिल हैं, चाहे वह कहीं भी स्थित हो।

24.अनुसूची को धारा 2(1)(x) के तहत परिभाषित किया गया है, जिसका अर्थ है धन शोधन निवारण अधिनियम, 2002 की अनुसूची। "अनुसूचित अपराध" को धारा 2(1)(y) के तहत परिभाषित किया गया है, जो इस प्रकार है:

"2(य) "अनुसूचित अपराध" से तात्पर्य है-

I. अनुसूची के भाग ए के अंतर्गत निर्दिष्ट अपराध; या

II. अनुसूची के भाग बी के अंतर्गत निर्दिष्ट अपराध यदि ऐसे अपराधों में शामिल कुल मूल्य [एक करोड़ रुपये] या उससे अधिक है; या

III. अनुसूची के भाग सी के अंतर्गत निर्दिष्ट अपराध।"

25.यह स्पष्ट है कि "अनुसूचित अपराध" का तात्पर्य अनुसूची के भाग ए के अंतर्गत निर्दिष्ट अपराधों से है; या अनुसूची के भाग बी के अंतर्गत निर्दिष्ट अपराधों से है, यदि ऐसे अपराधों में शामिल कुल मूल्य [एक करोड़ रुपये] या उससे अधिक है; या अनुसूची के भाग सी के अंतर्गत निर्दिष्ट अपराधों से है।

26.मनी लॉन्ड्रिंग के अपराध को अधिनियम, 2002 की धारा 3 के तहत परिभाषित किया गया है, जो इस प्रकार है:

"3. धन शोधन का अपराध। - जो कोई भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से किसी प्रक्रिया या गतिविधि में लिप्त होने का प्रयास करता है या जानबूझकर सहायता करता है या जानबूझकर एक पक्ष है या वास्तव में शामिल है [अपराध की आय सहित इसके छुपाने, कब्जे, अधिग्रहण या उपयोग और इसे बेदाग संपत्ति के रूप में पेश करने या दावा करने] से जुड़ी किसी भी प्रक्रिया या गतिविधि में शामिल है, वह धन शोधन के अपराध का दोषी होगा।

[स्पष्टीकरण.- शंकाओं को दूर करने के लिए यह स्पष्ट किया जाता है कि,–

i) कोई व्यक्ति धन शोधन के अपराध का दोषी होगा यदि ऐसा व्यक्ति प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अपराध की आय से जुड़ी निम्नलिखित प्रक्रियाओं या गतिविधियों में से एक या अधिक में शामिल पाया जाता है या जानबूझकर सहायता करता है या जानबूझकर एक पक्ष है या वास्तव में शामिल है, अर्थात्: -

i. छिपाना; या

ii. कब्ज़ा; या

iii. अधिग्रहण; या

iv. उपयोग; या

v. बेदाग संपत्ति के रूप में पेश करना; या

vi. बेदाग संपत्ति के रूप में दावा करना,किसी भी तरह से;

ii) अपराध की आय से जुड़ी प्रक्रिया या गतिविधि एक सतत गतिविधि है और तब तक जारी रहती है जब तक कोई व्यक्ति अपराध की आय को

छिपाकर या उस पर कब्जा करके या अधिग्रहण करके या उसका उपयोग करके या उसे बेदाग संपत्ति के रूप में पेश करके या किसी भी तरह से बेदाग संपत्ति के रूप में दावा करके प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उसका आनंद ले रहा है।]

27. उपर्युक्त प्रावधान से यह स्पष्ट है कि "धन शोधन अपराध" से तात्पर्य है कि जो कोई भी व्यक्ति प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अपराध की आय से संबंधित किसी भी प्रक्रिया या गतिविधि में शामिल होने का प्रयास करता है या जानबूझकर सहायता करता है या जानबूझकर एक पक्ष है या वास्तव में शामिल है, जिसमें इसे छिपाना, कब्ज़ा करना, अधिग्रहण करना या उपयोग करना और इसे बेदाग संपत्ति के रूप में पेश करना या दावा करना शामिल है, वह धन शोधन के अपराध का दोषी होगा।
28. यह भी स्पष्ट है कि अपराध की आय से जुड़ी प्रक्रिया या गतिविधि एक सतत गतिविधि है और तब तक जारी रहती है जब तक कोई व्यक्ति अपराध की आय को छिपाकर या उस पर कब्जा करके या उसे अर्जित करके या उसका उपयोग करके या उसे बेदाग संपत्ति के रूप में पेश करके या किसी भी तरह से बेदाग संपत्ति के रूप में दावा करके प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उसका आनंद ले रहा है।
29. अधिनियम, 2002 की धारा 4 के तहत धन शोधन के लिए सजा का प्रावधान किया गया है।
30. अधिनियम, 2002 की धारा 50 अधिकारियों को समन, दस्तावेज प्रस्तुत करने तथा साक्ष्य देने के संबंध में शक्ति प्रदान करती है। त्वरित संदर्भ के लिए, अधिनियम, 2002 की धारा 50 इस प्रकार है:

> **"50. समन, दस्तावेज प्रस्तुत करने और साक्ष्य देने आदि के संबंध में प्राधिकारियों की शक्तियाँ-** (1) निदेशक को धारा 13 के प्रयोजनों के लिए वही शक्तियाँ प्राप्त होंगी जो सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) के अंतर्गत निम्नलिखित मामलों के संबंध में मुकदमा चलाते समय सिविल न्यायालय में निहित हैं, अर्थात्:–
>
> i. खोज और निरीक्षण;
> ii. किसी व्यक्ति की उपस्थिति सुनिश्चित करना, जिसमें रिपोर्टिंग इकाई का कोई अधिकारी भी शामिल है, तथा शपथ पर उसकी जांच करना;
> iii. अभिलेख प्रस्तुत करने के लिए बाध्य करना;
> iv. शपथपत्रों पर साक्ष्य प्राप्त करना;
> v. गवाहों और दस्तावेजों की जांच के लिए कमीशन जारी करना;
> vi. कोई अन्य मामला जो विहित किया जा सकता है
>
> (2) निदेशक, अपर निदेशक, संयुक्त निदेशक, उप निदेशक या सहायक निदेशक को किसी भी व्यक्ति को बुलाने का अधिकार होगा, जिसकी उपस्थिति वह इस अधिनियम के तहत किसी जांच या कार्यवाही के दौरान साक्ष्य देने या कोई रिकॉर्ड पेश करने के लिए आवश्यक समझता है।

(3) इस प्रकार बुलाए गए सभी व्यक्ति व्यक्तिगत रूप से या प्राधिकृत एजेंटों के माध्यम से, जैसा कि अधिकारी निर्देश दे, उपस्थित होने के लिए बाध्य होंगे और जिस विषय के संबंध में उनसे पूछताछ की जा रही है, उस पर सत्य बताने या बयान देने के लिए बाध्य होंगे और ऐसे दस्तावेज प्रस्तुत करने के लिए बाध्य होंगे, जिनकी आवश्यकता हो।

(4) उपधारा (2) और (3) के अधीन प्रत्येक कार्यवाही भारतीय दंड संहिता (45 ऑफ 1860) की धारा 193 और धारा 228 के अर्थ में न्यायिक कार्यवाही समझी जाएगी।

(5) केन्द्रीय सरकार द्वारा इस संबंध में बनाए गए किसी नियम के अधीन रहते हुए, उपधारा (2) में निर्दिष्ट कोई भी अधिकारी इस अधिनियम के अधीन किसी कार्यवाही में उसके समक्ष प्रस्तुत किए गए किसी भी अभिलेख को, जितनी वह ठीक समझे, परिबद्ध कर सकेगा तथा उसे अपनी अभिरक्षा में रख सकेगा:

बशर्ते कि सहायक निदेशक या उप निदेशक-

I. ऐसा करने के कारणों को दर्ज किए बिना किसी भी रिकॉर्ड को जब्त करना; या

II. संयुक्त निदेशक की पूर्व स्वीकृति प्राप्त किए बिना, ऐसे किसी भी रिकॉर्ड को तीन महीने से अधिक अवधि के लिए अपने पास नहीं रखेगा।"

31. अधिनियम, 2002 के विभिन्न प्रावधानों के साथ-साथ "अपराध की आय" की परिभाषा की व्याख्या पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विजय मदनलाल चौधरी एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य, (2022) एससीसी ऑनलाइन एससी 929 के मामले में विचार किया गया है, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय के तीन माननीय न्यायाधीशों की पीठ ने अधिनियम, 2002 के उद्देश्य और आशय को ध्यान में रखते हुए इस मुद्दे पर निर्णय लिया है। अनुच्छेद-251 के तहत "अपराध की आय" की परिभाषा।

32. अपराध में शामिल व्यक्ति को गिरफ्तार करते समय जो शर्त पूरी की जानी है, उसकी व्याख्या पैराग्राफ-265 से स्पष्ट रूप से की गई है। त्वरित संदर्भ के लिए, प्रासंगिक पैराग्राफों को निम्नानुसार संदर्भित किया जा रहा है:

"265. दूसरे शब्दों में कहें तो, 2019 से पहले की धारा में स्वयं "सहित" शब्द शामिल था, जो अपराध की आय से जुड़ी विभिन्न प्रक्रिया या गतिविधि के संदर्भ का संकेत है। इस प्रकार, मुख्य प्रावधान (जैसा कि स्पष्टीकरण भी) यह बताता है कि यदि कोई व्यक्ति अपराध की आय से जुड़ी किसी प्रक्रिया या गतिविधि में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से शामिल पाया जाता है, तो उसे मनी लॉन्ड्रिंग के अपराध का दोषी माना जाना चाहिए। यदि याचिकाकर्ताओं द्वारा निर्धारित व्याख्या को स्वीकार किया जाता है, तो यह माना जाएगा कि केवल

प्रश्नगत संपत्ति को बेदाग संपत्ति के रूप में पेश करने या दावा करने पर ही अपराध पूरा हो जाएगा। यह अधिनियम की धारा 3 के पीछे विधायी मंशा की प्रभावशीलता को कमजोर करेगा और साथ ही "प्रक्षेपण या दावा करने" से पहले "और" शब्द की घटना के संबंध में FATF द्वारा व्यक्त किए गए दृष्टिकोण की अवहेलना करेगा। प्रताप सिंह बनाम झारखंड राज्य मामले में इस न्यायालय ने कहा कि अंतर्राष्ट्रीय संधियाँ, अनुबंध और अभिसमय यद्यपि नगरपालिका कानून का हिस्सा नहीं हो सकते हैं, फिर भी न्यायालयों द्वारा उनका संदर्भ लिया जाना चाहिए और उनका पालन किया जाना चाहिए, क्योंकि भारत उक्त संधियों का एक पक्ष है। इस न्यायालय ने आगे कहा कि भारत के संविधान और अन्य मौजूदा क़ानूनों को अंतर्राष्ट्रीय कानून के नियमों के अनुरूप पढ़ा गया है। यह भी देखा गया कि भारत के संविधान और संसद द्वारा बनाए गए अधिनियमों को वर्तमान परिदृश्य के संदर्भ में और अंतर्राष्ट्रीय संधियों और अभिसमय को ध्यान में रखते हुए समझा जाना चाहिए क्योंकि हमारा संविधान विश्व समुदाय की संस्थाओं का ध्यान रखता है जिन्हें बनाया गया था। अपैरल एक्सपोर्ट प्रमोशन काउंसिल बनाम ए.के. चोपड़ा मामले में न्यायालय ने कहा कि घरेलू न्यायालयों का दायित्व है कि वे घरेलू कानूनों की व्याख्या करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय अभिसमयों और मानदंडों को उचित सम्मान दें, खासकर तब जब उनके बीच कोई असंगति न हो और घरेलू कानून में कोई शून्यता हो। इस दृष्टिकोण को गीता हरिहरन, पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज और नेशनल लीगल सर्विसेज अथॉरिटी बनाम भारत संघ में भी दोहराया गया है।"

33. धारा 50 के निहितार्थ को भी ध्यान में रखा गया है। प्रासंगिक पैराग्राफ, यानी पैराग्राफ-422, 424, 425, 431, 434 इस प्रकार हैं:

"422. इस प्रावधान की वैधता को संविधान के अनुच्छेद 20(3) और 21 का उल्लंघन करने के आधार पर चुनौती दी गई है। क्योंकि, यह 2002 अधिनियम के तहत अधिकृत अधिकारी को जांच के दौरान किसी भी व्यक्ति को बुलाने और उसका बयान दर्ज करने की अनुमति देता है। इसके अलावा, प्रावधान यह अनिवार्य करता है कि व्यक्ति को जांच के विषय के संबंध में अपने व्यक्तिगत ज्ञान में ज्ञात सत्य और सही तथ्यों का खुलासा करना चाहिए। व्यक्ति को 2002 अधिनियम की धारा 63 के अनुसार झूठे या गलत होने के लिए दंडित किए जाने की धमकी के साथ दिए गए बयान पर हस्ताक्षर करने के लिए भी बाध्य किया जाता है। इससे पहले कि हम मामले का आगे विश्लेषण करें, संशोधित 2002 अधिनियम की धारा 50 को पुन: प्रस्तुत करना उचित है। -----:

424. इस प्रावधान के द्वारा निदेशक को उपधारा (1) में निर्दिष्ट मामलों के संबंध में मुकदमा चलाने के दौरान 1908 संहिता के तहत सिविल न्यायालय में निहित समान शक्तियों का प्रयोग करने का अधिकार दिया गया है। यह

बैंकिंग कंपनियों, वित्तीय संस्थानों और मध्यस्थों द्वारा किए गए कार्यों के संबंध में जुर्माना लगाने के लिए निदेशक की शक्तियों से संबंधित 2002 अधिनियम की धारा 13 के संदर्भ में है। जिस सेटिंग में धारा 50 रखी गई है और धारा 13 के तहत जुर्माना लगाने के प्रयोजनों के लिए सिविल न्यायालय में निहित समान शक्तियों के साथ निदेशक को सशक्त बनाने का विस्तार स्पष्ट रूप से बहुत विशिष्ट है और अन्यथा नहीं।

425. वास्तव में, धारा 50 की उप-धारा (2) निदेशक, अतिरिक्त निदेशक, संयुक्त निदेशक, उप निदेशक या सहायक निदेशक को किसी भी व्यक्ति को समन जारी करने में सक्षम बनाती है, जिसकी उपस्थिति वह इस अधिनियम के तहत किसी भी जांच या कार्यवाही के दौरान साक्ष्य देने या कोई रिकॉर्ड पेश करने के लिए आवश्यक समझता है। हमने पहले ही इस फैसले के पहले भाग में अभिव्यक्ति "कार्यवाही" की व्यापकता पर प्रकाश डाला है और माना है कि यह न्यायाधिकरण या विशेष न्यायालय के समक्ष कार्यवाही पर लागू होता है, जैसा भी मामला हो। फिर भी, उप-धारा (2) अधिकृत अधिकारियों को किसी भी व्यक्ति को समन जारी करने का अधिकार देती है। हम यह समझने में विफल हैं कि अनुच्छेद 20 (3) ऐसे समन के अनुसरण में बयान दर्ज करने की प्रक्रिया के संबंध में कैसे लागू होगा जो केवल इस अधिनियम के तहत कार्यवाही के संबंध में जानकारी या साक्ष्य एकत्र करने के उद्देश्य से है। वास्तव में, जिस व्यक्ति को बुलाया गया है, वह व्यक्तिगत रूप से या अधिकृत एजेंट के माध्यम से उपस्थित होने और किसी भी विषय पर सत्य बताने के लिए बाध्य है, जिसके संबंध में उसकी जांच की जा रही है या उससे बयान देने और दस्तावेज पेश करने की अपेक्षा की जा रही है, जैसा कि 2002 अधिनियम की धारा 50 की उप-धारा (3) के आधार पर आवश्यक हो सकता है। आलोचना अनिवार्य रूप से उपधारा (4) के कारण है, जो यह प्रावधान करती है कि उप-धारा (2) और (3) के तहत प्रत्येक कार्यवाही आईपीसी की धारा 193 और 228 के अर्थ के भीतर न्यायिक कार्यवाही मानी जाएगी। फिर भी, तथ्य यह है कि अनुच्छेद 20(3) या उस मामले के लिए साक्ष्य अधिनियम की धारा 25, केवल तभी लागू होगी जब बुलाया गया व्यक्ति प्रासंगिक समय पर किसी अपराध का आरोपी हो और उसे खुद के खिलाफ गवाह बनने के लिए मजबूर किया जा रहा हो। यह स्थिति अच्छी तरह से स्थापित है। शर्मा ने इसी तरह की चुनौती का सामना किया था, जिसमें जांच के लिए आवश्यक दस्तावेज प्राप्त करने के लिए मजिस्ट्रेट द्वारा वारंट जारी किए गए थे, जो संविधान के अनुच्छेद 20(3) का उल्लंघन था। इस न्यायालय ने कहा कि अनुच्छेद 20(3) में दी गई गारंटी "साक्ष्य संबंधी बाध्यता" के विरुद्ध है और यह मौखिक साक्ष्य तक सीमित नहीं है। इतना ही नहीं, यह तब भी लागू होता है जब व्यक्ति को खुद के खिलाफ गवाह बनने के लिए मजबूर किया जाता है, जो मौखिक साक्ष्य देने या दस्तावेज पेश करने के लिए

समन जारी करने मात्र से नहीं हो सकता। इसके अलावा, गवाह बनना सबूत पेश करने से ज्यादा कुछ नहीं है और ऐसे सबूत अलग-अलग तरीकों से पेश किए जा सकते हैं। न्यायालय ने आगे कहा:

> "मोटे तौर पर कहा जाए तो अनुच्छेद 20(3) में दी गई गारंटी "साक्षी अनिवार्यता" के विरुद्ध है। यह सुझाव दिया जाता है कि यह किसी व्यक्ति के मौखिक साक्ष्य तक सीमित है, जो किसी अपराध के लिए सुनवाई के दौरान गवाह के रूप में बुलाया जाता है। हम संवैधानिक गारंटी की सामग्री को इस मात्र शाब्दिक अर्थ तक सीमित करने का कोई कारण नहीं देख सकते। इसलिए इसे सीमित करना गारंटी के मूल उद्देश्य को छीनना होगा और कुछ अमेरिकी निर्णयों में बताए गए मूल उद्देश्य को नज़रअंदाज़ करना होगा। अनुच्छेद 20(3) में प्रयुक्त वाक्यांश "गवाह होना" है। कोई व्यक्ति केवल मौखिक साक्ष्य देकर ही "गवाह" नहीं हो सकता, बल्कि दस्तावेज़ प्रस्तुत करके या गूंगे गवाह के मामले में (साक्ष्य अधिनियम की धारा 119 देखें) या इसी तरह के अन्य तरीके से भी "गवाह" हो सकता है। "गवाह होना" "साक्ष्य प्रस्तुत करने" से अधिक कुछ नहीं है, और ऐसा साक्ष्य होठों से या किसी चीज़ या दस्तावेज़ को प्रस्तुत करके या अन्य तरीकों से प्रस्तुत किया जा सकता है। जहां तक दस्तावेजों के प्रस्तुतीकरण का सवाल है, इसमें कोई संदेह नहीं है कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 139 कहती है कि समन पर दस्तावेज प्रस्तुत करने वाला व्यक्ति गवाह नहीं है। लेकिन उस धारा का उद्देश्य जिरह के अधिकार को विनियमित करना है। यह "गवाह" शब्द के अर्थ के लिए मार्गदर्शक नहीं है, जिसे इसके स्वाभाविक अर्थ में समझा जाना चाहिए, यानी, साक्ष्य प्रस्तुत करने वाले व्यक्ति को संदर्भित करते हुए। वास्तव में, प्रत्येक सकारात्मक स्वैच्छिक कार्य जो साक्ष्य प्रस्तुत करता है, वह गवाही है, और साक्ष्य संबंधी बाध्यता उस दबाव को दर्शाती है जो व्यक्ति की सकारात्मक स्वैच्छिक साक्ष्य संबंधी कृत्यों को प्राप्त करती है, जो उसकी ओर से चुप्पी या समर्पण के नकारात्मक रवैये के विपरीत है। न ही यह सोचने का कोई कारण है कि इस प्रकार प्राप्त साक्ष्य के संबंध में सुरक्षा केवल अदालत कक्ष में मुकदमे के दौरान होने वाली घटनाओं तक ही सीमित है। अनुच्छेद 20(3) में प्रयुक्त वाक्यांश "गवाह होना" है न कि "गवाह के रूप में पेश होना"। इसका अर्थ यह है कि अभियुक्त को दी जाने वाली सुरक्षा, जहाँ तक यह "गवाह बनना" वाक्यांश से संबंधित है, केवल न्यायालय कक्ष में गवाही देने के लिए बाध्यता के संबंध में नहीं है, बल्कि उससे पहले प्राप्त की गई बाध्यतापूर्ण गवाही तक भी विस्तारित हो सकती है। इसलिए यह उस व्यक्ति को उपलब्ध है जिसके विरुद्ध किसी अपराध के किए जाने से संबंधित औपचारिक आरोप लगाया गया है, जिसके परिणामस्वरूप सामान्य रूप से अभियोजन हो सकता है। क्या यह अन्य स्थितियों में अन्य

व्यक्तियों के लिए उपलब्ध है, इस मामले में निर्णय की आवश्यकता नहीं है।"

(जोर दिया गया)

431. 2002 अधिनियम के संदर्भ में, यह याद रखना चाहिए कि धारा 50 के तहत प्राधिकरण द्वारा अपराध की आय के बारे में जांच के संबंध में समन जारी किया जाता है, जिसे कुर्क किया जा सकता है और न्यायनिर्णयन प्राधिकरण के समक्ष न्यायनिर्णयन के लिए लंबित है। ऐसी कार्रवाई के संबंध में, नामित अधिकारियों को न्यायनिर्णयन प्राधिकरण के समक्ष प्रस्तुत की जाने वाली जानकारी और साक्ष्य एकत्र करने के लिए किसी भी व्यक्ति को बुलाने का अधिकार दिया गया है। यह आवश्यक नहीं है कि नोटिस प्राप्तकर्ता के खिलाफ अभियोजन शुरू किया जाए। इस अधिनियम के तहत नामित अधिकारियों को सौंपी गई शक्ति, हालांकि वास्तविक अर्थों में जांच के रूप में है, अपराध की आय के संबंध में कार्रवाई शुरू करने या आगे बढ़ाने की सुविधा के लिए प्रासंगिक तथ्यों का पता लगाने के लिए जांच करना है, यदि स्थिति ऐसा चाहती है और न्यायनिर्णयन प्राधिकरण के समक्ष प्रस्तुत किया जाना है। यह अलग बात है कि जांच के दौरान एकत्रित की गई जानकारी और साक्ष्य से धन शोधन के अपराध का खुलासा हो सकता है और उस व्यक्ति की संलिप्तता का पता चल सकता है, जिसे प्राधिकरण द्वारा जारी समन के अनुसार खुलासा करने के लिए बुलाया गया है। इस स्तर पर, ऐसे व्यक्ति के धन शोधन के अपराध में शामिल होने की संभावना का संकेत देने वाला कोई औपचारिक दस्तावेज नहीं होगा। यदि उसके द्वारा दिए गए बयान से धन शोधन के अपराध या अपराध की आय के अस्तित्व का पता चलता है, तो वह अधिनियम के तहत कार्रवाई योग्य हो जाता है। दूसरे शब्दों में, संपत्ति के अपराध की आय होने के संबंध में प्रासंगिक तथ्यों की जांच करने के उद्देश्य से बयान दर्ज करने के चरण में, उस अर्थ में, अभियोजन के लिए जांच नहीं है; और किसी भी मामले में, नोटिस प्राप्तकर्ता के खिलाफ कोई औपचारिक आरोप नहीं होगा। इस तरह के समन प्राधिकृत अधिकारियों द्वारा की गई जांच में गवाहों को भी जारी किए जा सकते हैं। हालांकि, अन्य सामग्री और साक्ष्य के आधार पर आगे की जांच के बाद, ऐसे व्यक्ति (नोटिसकर्ता) की संलिप्तता का पता चलता है, अधिकृत अधिकारी निश्चित रूप से उसके खिलाफ उसके द्वारा किए गए कार्यों या चूक के लिए कार्रवाई कर सकते हैं। ऐसी स्थिति में, समन जारी करने के चरण में, व्यक्ति संविधान के अनुच्छेद 20(3) के तहत संरक्षण का दावा नहीं कर सकता है। हालांकि, अगर ईडी अधिकारी द्वारा औपचारिक गिरफ्तारी के बाद उसका बयान दर्ज किया जाता है, तो साक्ष्य अधिनियम की धारा 20(3) या धारा 25 के परिणाम लागू हो सकते हैं, जो यह आग्रह करते हैं कि यह स्वीकारोक्ति की प्रकृति का है, इसलिए उसके खिलाफ साबित नहीं किया जाएगा। इसके अलावा, यह अभियोजन पक्ष को उसके दावे की मिथ्याता को

इंगित करने के लिए अन्य ठोस सामग्री के आधार पर 2002 अधिनियम की धारा 63 के तहत परिणामों सहित ऐसे व्यक्ति के खिलाफ कार्यवाही करने से नहीं रोकेगा। यह साक्ष्य के नियम का मामला होगा।

434. इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि अधिकारियों को दी गई शक्ति अपराध की आय के अस्तित्व और उससे संबंधित प्रक्रिया या गतिविधि में व्यक्तियों की संलिप्तता का पता लगाने के लिए प्रासंगिक मामलों की जांच करने के लिए है, ताकि ऐसे व्यक्ति के खिलाफ उचित कार्रवाई शुरू की जा सके, जिसमें अंततः केंद्र सरकार में निहित संपत्ति की जब्ती, कुर्की और जब्ती शामिल है।

34. उपर्युक्त अवलोकन से यह स्पष्ट है कि 2002 अधिनियम के उद्देश्य और लक्ष्य, जिसके लिए इसे अधिनियमित किया गया है, केवल धन शोधन के अपराध के लिए दण्ड तक सीमित नहीं है, बल्कि धन शोधन की रोकथाम के लिए उपाय भी प्रदान करना है। यह अपराध की आय की कुर्की के लिए भी प्रावधान करता है, जिसे छुपाया जा सकता है, स्थानांतरित किया जा सकता है या किसी भी तरह से निपटा जा सकता है, जिसके परिणामस्वरूप 2002 अधिनियम के तहत ऐसी आय की जब्ती से संबंधित किसी भी कार्यवाही को विफल किया जा सकता है। यह अधिनियम बैंकिंग कंपनियों, वित्तीय संस्थानों और मध्यस्थों को लेनदेन के रिकॉर्ड बनाए रखने, 2002 अधिनियम के अध्याय IV के अनुसार निर्धारित समय के भीतर ऐसे लेनदेन की जानकारी प्रस्तुत करने के लिए भी बाध्य करता है।

35. उपरोक्त निर्णय में विधेय अपराध पर विचार किया गया है, जिसमें धारा 2(1)(यू) के अंतर्गत निहित "अपराध की आय" की परिभाषा के अंतर्गत अधिनियम 23, 2019 के माध्यम से डाले गए स्पष्टीकरण को ध्यान में रखते हुए, जिसके द्वारा और जिसके तहत, संदेह को दूर करने के उद्देश्य से यह स्पष्ट किया गया है कि, "अपराध की आय" में न केवल अनुसूचित अपराध से प्राप्त या प्राप्त की गई संपत्ति शामिल है, बल्कि कोई भी संपत्ति भी शामिल है जो अनुसूचित अपराध से संबंधित किसी भी आपराधिक गतिविधि के परिणामस्वरूप प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त या प्राप्त की जा सकती है, जिसका अर्थ है, "कोई भी संपत्ति जो अनुसूचित अपराध से संबंधित किसी भी आपराधिक गतिविधि के परिणामस्वरूप प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त या प्राप्त की जा सकती है" शब्द अपराध की आय के अंतर्गत आएंगे।

36. जहां तक धारा 45(1)(i)(ii) के तात्पर्य का संबंध है, उपर्युक्त प्रावधान गैर-बाधा खंड से शुरू होता है कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में निहित किसी भी बात के बावजूद, इस अधिनियम के तहत किसी अपराध के आरोपी किसी भी व्यक्ति को जमानत पर या अपने स्वयं के बांड पर रिहा नहीं किया जाएगा जब तक कि -

I. लोक अभियोजक को ऐसी रिहाई के लिए आवेदन का विरोध करने का अवसर दिया गया है; और

II. जहां सरकारी वकील आवेदन का विरोध करता है, अदालत संतुष्ट है कि यह मानने के लिए उचित आधार हैं कि वह ऐसे अपराध का दोषी नहीं है और जमानत पर रहते हुए उसके द्वारा कोई अपराध करने की संभावना नहीं है

उपधारा (2) में दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 या जमानत देने पर वर्तमान में लागू किसी अन्य कानून के तहत सीमाओं के अतिरिक्त उपधारा (1) में निर्दिष्ट जमानत देने पर सीमाएं लगाई गई हैं।

उपधारा (2) के अंतर्गत स्पष्टीकरण भी है, जिसमें संदेहों को दूर करने के उद्देश्य से स्पष्टीकरण डाला गया है कि "संज्ञेय और अजमानतीय अपराधों का होना" का अभिप्राय यह होगा और सदैव यही समझा जाएगा कि इस अधिनियम के अंतर्गत सभी अपराध संज्ञेय अपराध और अजमानतीय अपराध होंगे, भले ही दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में कोई प्रतिकूल बात निहित हो, और तदनुसार इस अधिनियम के अंतर्गत प्राधिकृत अधिकारी धारा 19 के अंतर्गत शर्तों की पूर्ति और इस धारा के अंतर्गत निहित शर्तों के अधीन किसी अभियुक्त को बिना वारंट के गिरफ्तार करने के लिए सशक्त हैं।

37. धारा 45 के निहितार्थ के बारे में तथ्य की व्याख्या माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विजय मदनलाल चौधरी एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य (सुप्रा) के पैराग्राफ-371-374 में की गई है। त्वरित संदर्भ के लिए, उक्त पैराग्राफ को निम्नानुसार संदर्भित किया जा रहा है:

> **"371.** 2002 अधिनियम में जमानत के बारे में प्रासंगिक प्रावधानों को इस अधिनियम के तहत अपराध से संबंधित अध्याय VII में धारा 44(2), 45 और 46 में देखा जा सकता है। मुख्य शिकायत 2002 अधिनियम की धारा 45 में निर्दिष्ट दोहरी शर्तों के बारे में है। इससे पहले कि हम आगे विस्तार से बताएं, संशोधित धारा 45 को फिर से प्रस्तुत करना उचित होगा। यह इस प्रकार है:
>
> > **"45. अपराधों का संज्ञेय और गैर-जमानती होना।**-(1)[दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में किसी बात के होते हुए भी, [इस अधिनियम के तहत] किसी अपराध का आरोपी कोई भी व्यक्ति
> > जमानत पर या अपने स्वयं के बांड पर तब तक रिहा नहीं किया जाएगा, जब तक कि']
> >
> > I. लोक अभियोजक को ऐसी रिहाई के लिए आवेदन का विरोध करने का अवसर दिया गया है; और
> >
> > II. जहां सरकारी वकील आवेदन का विरोध करता है, अदालत संतुष्ट है कि यह मानने के लिए उचित आधार हैं कि वह ऐसे अपराध का दोषी नहीं है और जमानत पर रहते हुए उसके द्वारा कोई अपराध करने की संभावना नहीं है:

बशर्ते कि कोई व्यक्ति जो सोलह वर्ष से कम आयु का है, या महिला है या बीमार या अशक्त है, [या अकेले या अन्य सह-अभियुक्तों के साथ एक करोड़ रुपये से कम की धनराशि के धन शोधन का आरोपी है], जमानत पर रिहा किया जा सकता है, यदि विशेष न्यायालय ऐसा निर्देश देता है:

बशर्ते कि विशेष न्यायालय धारा 4 के अंतर्गत दंडनीय किसी अपराध का संज्ञान तब तक नहीं लेगा जब तक कि लिखित में शिकायत न की गई हो-

i. निदेशक; या

ii. केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार का कोई अधिकारी जिसे केन्द्रीय सरकार द्वारा इस निमित्त लिखित रूप में प्राधिकृत किया गया हो, उस सरकार द्वारा इस निमित्त किए गए सामान्य या विशेष आदेश द्वारा।

[(1ए) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) या इस अधिनियम के किसी अन्य प्रावधान में निहित किसी बात के होते हुए भी, कोई भी पुलिस अधिकारी इस अधिनियम के तहत किसी अपराध की जांच तब तक नहीं करेगा जब तक कि केंद्रीय सरकार द्वारा सामान्य या विशेष आदेश द्वारा विशेष रूप से अधिकृत न किया जाए और ऐसी शर्तों के अधीन, जो निर्धारित की जा सकती हैं।]

(2) [***] उपधारा (1) में निर्दिष्ट जमानत देने की सीमा दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) या जमानत देने पर वर्तमान में लागू किसी अन्य कानून के तहत सीमाओं के अतिरिक्त है।

[स्पष्टीकरण.-संदेहों को दूर करने के लिए यह स्पष्ट किया जाता है कि अभिव्यक्ति "संज्ञेय और गैर-जमानती अपराधों का होना" का अर्थ होगा और हमेशा यही माना जाएगा कि इस अधिनियम के तहत सभी अपराध संज्ञेय अपराध और गैर-जमानती अपराध होंगे, भले ही दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में इसके विपरीत कुछ भी निहित हो, और तदनुसार इस अधिनियम के तहत अधिकृत अधिकारी धारा 19 के तहत शर्तों की पूर्ति और इस धारा के तहत निहित शर्तों के अधीन, बिना वारंट के किसी अभियुक्त को गिरफ्तार करने के लिए सशक्त हैं।]"

372. धारा 45 को 2005 के अधिनियम 20, 2018 के अधिनियम 13 और वित्त (सं. 2) अधिनियम, 2019 के तहत संशोधित किया गया है। 23.11.2017 से पहले प्राप्त प्रावधान कुछ अलग तरीके से पढ़े गए। धारा

45 की उपधारा (1) की संवैधानिक वैधता, जैसा कि वह तब थी, निकेश ताराचंद शाह में विचार की गई थी। इस न्यायालय ने 2002 के अधिनियम की धारा 45(1) को, जैसा कि वह तब थी, इस हद तक असंवैधानिक घोषित किया कि उसने जमानत पर रिहाई के लिए दो और शर्तें लगाईं, जो संविधान के अनुच्छेद 14 और 21 का उल्लंघन करती हैं। जिन दो शर्तों का उल्लेख जुड़वां शर्तों के रूप में किया गया है, वे हैं:

i. यह मानने के लिए उचित आधार हैं कि वह ऐसे अपराध का दोषी नहीं है; और
ii. जमानत पर रहते हुए उसके द्वारा कोई अपराध करने की संभावना नहीं है

373. याचिकाकर्ताओं के अनुसार, चूंकि इस न्यायालय द्वारा दोनों शर्तों को अमान्य और असंवैधानिक घोषित किया गया है, इसलिए वे निरस्त हो गई हैं। इस तर्क को पुष्ट करने के लिए मणिपुर राज्य के कथन का सहारा लिया गया है।

374. हमारे द्वारा उत्तर दिया जाने वाला पहला मुद्दा यह है कि क्या निकेश ताराचंद शाह में इस न्यायालय के निर्णय के बाद भी कानून की ये दोनों शर्तें वैधानिक रूप से वैध बनी रहीं और यदि हां, तो 2002 के अधिनियम की धारा 45(1) में अधिनियम 13/2018 के तहत किए गए संशोधन के मद्देनजर इस न्यायालय द्वारा की गई घोषणा का कोई महत्व नहीं होगा। इस तर्क को हमें लंबे समय तक टालने की आवश्यकता नहीं है। हम ऐसा इसलिए कह रहे हैं क्योंकि मणिपुर राज्य के निर्णय के पैराग्राफ 29 में यह अवलोकन कि न्यायालय द्वारा यह घोषित किए जाने के कारण कि कानून असंवैधानिक है, कानून पूरी तरह से समाप्त हो जाता है जैसे कि इसे कभी पारित ही नहीं किया गया था, प्रासंगिक है। इस मामले में न्यायालय निरसन अधिनियम की प्रभावकारिता से निपट रहा था। ऐसा करते समय न्यायालय ने निरसन अधिनियम पर ध्यान दिया और विधायी शक्ति की कमी के संदर्भ में उक्त अवलोकन किया। तर्क की प्रक्रिया में, इसने बेहराम खुर्शीद पेसिकाका और दीप चंद7 में की गई व्याख्या पर ध्यान दिया, जिसमें कूली ऑन कॉन्स्टीट्यूशनल लिमिटेशंस और नॉर्टन बनाम शेल्बी काउंटी में अमेरिकी न्यायशास्त्र की व्याख्या शामिल है।

38. तत्पश्चात, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने तरुण कुमार बनाम सहायक निदेशक प्रवर्तन निदेशालय, (2023) एससीसी ऑनलाइन एससी 1486 के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय की बड़ी पीठ द्वारा विजय मदनलाल चौधरी एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य (सुप्रा) में निर्धारित कानून को ध्यान में रखते हुए यह निर्धारित किया है कि चूंकि धारा 45 के तहत निर्दिष्ट शर्तें अनिवार्य हैं, इसलिए उनका अनुपालन किया जाना आवश्यक है। न्यायालय को यह संतुष्ट होना आवश्यक है कि यह मानने के लिए उचित आधार हैं कि अभियुक्त ऐसे अपराध का दोषी नहीं है और उसके जमानत पर रहते हुए कोई अपराध करने की संभावना नहीं है।

यह भी देखा गया है कि अधिनियम की धारा 24 के तहत वैधानिक अनुमान के अनुसार, न्यायालय या प्राधिकरण को यह मानने का अधिकार है कि जब तक विपरीत साबित न हो जाए, अधिनियम के तहत अपराध की आय से संबंधित किसी भी कार्यवाही में, धारा 3 के तहत धन शोधन के अपराध में आरोपित व्यक्ति के मामले में, अपराध की ऐसी आय धन शोधन में शामिल है। पीएमएल अधिनियम की धारा 45 में उल्लिखित ऐसी शर्तों का पालन धारा 439 सीआरपीसी के तहत जमानत के लिए किए गए आवेदन के संबंध में भी करना होगा, क्योंकि पीएमएल अधिनियम को पीएमएल अधिनियम की धारा 71 के तहत वर्तमान में लागू अन्य कानून पर अधिभावी प्रभाव दिया गया है। तत्काल संदर्भ के लिए, उक्त निर्णय का पैराग्राफ-17 इस प्रकार है:

> **"17.** जैसा कि अब तक तय हो चुका है, धारा 45 के तहत निर्दिष्ट शर्तें अनिवार्य हैं। उनका अनुपालन किया जाना चाहिए। न्यायालय को यह संतुष्ट होना चाहिए कि यह मानने के लिए उचित आधार हैं कि अभियुक्त ऐसे अपराध का दोषी नहीं है और जमानत पर रहते हुए उसके द्वारा कोई अपराध करने की संभावना नहीं है। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि अधिनियम की धारा 24 के तहत अनुमत वैधानिक अनुमान के अनुसार, न्यायालय या प्राधिकरण यह मानने का हकदार है कि जब तक विपरीत साबित न हो जाए, अधिनियम के तहत अपराध की आय से संबंधित किसी भी कार्यवाही में, धारा 3 के तहत धन शोधन के अपराध के आरोप में किसी व्यक्ति के मामले में, अपराध की ऐसी आय धन शोधन में शामिल है। पीएमएल अधिनियम की धारा 45 में उल्लिखित ऐसी शर्तों का अनुपालन धारा 439 सीआरपीसी के तहत जमानत के लिए किए गए आवेदन के संबंध में भी करना होगा। पी.एम.एल अधिनियम की धारा 71 के तहत वर्तमान में लागू अन्य कानूनों पर पी.एम.एल अधिनियम को दिए गए अधिभावी प्रभाव को देखते हुए।

39. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने उक्त निर्णय में आगे यह निर्धारित किया है कि जमानत का लाभ देने से पहले अधिनियम, 2002 की धारा 45 की आवश्यकता को पूरा करने के लिए दोहरी शर्तों का पालन किया जाना चाहिए, जिस पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने विजय **मदनलाल चौधरी एवं अन्य बनाम यूनियन ऑफ इंडिया एवं अन्य** (सुप्रा) में विचार किया है, जिसमें यह देखा गया है कि अभियुक्त अपराध का दोषी नहीं है और जमानत पर रहते हुए उसके द्वारा कोई अपराध करने की संभावना नहीं है।

40. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **विजय मदनलाल चौधरी एवं अन्य बनाम यूनियन ऑफ इंडिया एवं अन्य** (सुप्रा) में दिए गए निर्णय में अनुच्छेद-284 के अंतर्गत यह माना गया है कि 2002 अधिनियम के अंतर्गत प्राधिकरण को किसी व्यक्ति पर धन शोधन के अपराध के लिए तभी मुकदमा चलाना चाहिए, जब उसके पास यह विश्वास

करने का कारण हो, जिसे लिखित रूप में दर्ज किया जाना आवश्यक है कि उस व्यक्ति के पास "अपराध की आय" है। केवल तभी जब उस विश्वास को ठोस और विश्वसनीय साक्ष्य द्वारा समर्थित किया जाता है, जो अपराध की आय से जुड़ी किसी भी प्रक्रिया या गतिविधि में संबंधित व्यक्ति की भागीदारी को दर्शाता है, तो अधिनियम के तहत अपराध की आय की कुर्की और जब्ती के लिए कार्रवाई आगे बढ़ाई जा सकती है और जब तक कि यह केंद्र सरकार को निहित नहीं कर दिया जाता, तब तक शुरू की गई ऐसी प्रक्रिया एक स्वतंत्र प्रक्रिया होगी।

जहां तक अधिनियम, 2002 की धारा 45 के तहत जमानत देने के मुद्दे का संबंध है, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, विजय मदनलाल चौधरी और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य (सुप्रा) में दिए गए निर्णय के पैराग्राफ-412 में यह टिप्पणी की गई है कि राहत चाहे किसी भी रूप में दी गई हो, जिसमें कार्यवाही की प्रकृति भी शामिल है, चाहे वह 1973 संहिता की धारा 438 के तहत हो या उस मामले के लिए, संवैधानिक न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का आह्वान करके, 2002 की धारा 45 के अंतर्निहित सिद्धांत और कठोरताएं लागू होनी चाहिए और बिना किसी अपवाद के 2002 अधिनियम के उद्देश्यों को बनाए रखने के लिए माना जाना चाहिए, जो कि धन शोधन के खतरे से निपटने के लिए कड़े नियामक उपायों का प्रावधान करने वाला एक विशेष कानून है।

41. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **गौतम कुंडू बनाम प्रवर्तन निदेशालय (धन शोधन निवारण अधिनियम), भारत सरकार मनोज कुमार, सहायक निदेशक, पूर्वी क्षेत्र के माध्यम से (2015) 16 एससीसी 1,** के मामले में पैराग्राफ-30 में यह माना है कि पी.एम.एल.ए की धारा 45 के तहत निर्दिष्ट शर्तें अनिवार्य हैं और उनका अनुपालन किया जाना आवश्यक है, जिसे पीएमएलए की धारा 65 और धारा 71 के प्रावधानों द्वारा और मजबूत किया गया है। धारा 65 के अनुसार सीआरपीसी के प्रावधान लागू होंगे, जब तक कि वे इस अधिनियम के प्रावधानों के साथ असंगत न हों और धारा 71 में यह प्रावधान है कि पीएमएलए के प्रावधानों का प्रभाव सर्वोपरि होगा, भले ही वर्तमान में लागू किसी अन्य कानून में इसके साथ असंगत कुछ भी हो। पीएमएलए का प्रभाव सर्वोपरि है और सीआरपीसी के प्रावधान तभी लागू होंगे, जब वे इस अधिनियम के प्रावधानों के साथ असंगत न हों।

इसलिए, धारा 439 सीआरपीसी के तहत जमानत के लिए किए गए आवेदन के संबंध में भी पीएमएलए की धारा 45 में उल्लिखित शर्तों का पालन करना होगा। धारा 24 के प्रावधानों के साथ यह प्रावधान है कि जब तक विपरीत साबित नहीं हो जाता, तब तक प्राधिकरण या न्यायालय यह मान लेगा कि अपराध की आय मनी लॉन्ड्रिंग में शामिल है और यह साबित करने का भार अपीलकर्ता पर है कि

अपराध की आय शामिल नहीं है। तत्काल संदर्भ के लिए, उक्त निर्णय का पैराग्राफ-30 इस प्रकार है:

> **"30.** पीएमएलए की धारा 45 के तहत निर्दिष्ट शर्तें अनिवार्य हैं और इनका पालन किया जाना आवश्यक है, जिसे पीएमएलए की धारा 65 और धारा 71 के प्रावधानों द्वारा और मजबूत किया गया है। धारा 65 के अनुसार सीआरपीसी के प्रावधान लागू होंगे, जब तक कि वे इस अधिनियम के प्रावधानों के साथ असंगत न हों और धारा 71 में प्रावधान है कि पीएमएलए के प्रावधानों का किसी अन्य कानून में निहित किसी भी असंगत बात के बावजूद अधिभावी प्रभाव होगा। पीएमएलए का अधिभावी प्रभाव है और सीआरपीसी के प्रावधान तभी लागू होंगे, जब वे इस अधिनियम के प्रावधानों के साथ असंगत न हों। इसलिए, पीएमएलए की धारा 45 में उल्लिखित शर्तों का सीआरपीसी की धारा 439 के तहत किए गए जमानत के आवेदन के संबंध में भी पालन करना होगा। धारा 24 के प्रावधानों के साथ यह प्रावधान है कि जब तक विपरीत साबित नहीं हो जाता, प्राधिकरण या न्यायालय यह मान लेगा कि अपराध की आय मनी लॉन्ड्रिंग में शामिल है और यह साबित करने का भार अपीलकर्ता पर है कि अपराध की आय शामिल नहीं है।

42. तरुण कुमार बनाम सहायक निदेशक प्रवर्तन निदेशालय (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 45 के निहितार्थ और अनुच्छेद 17 और 18 में समानता के सिद्धांत को फिर से दोहराया है। अनुच्छेद 18 में समानता के मुद्दे पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह टिप्पणी करते हुए विचार किया है कि समानता कानून नहीं है। समानता के सिद्धांत को लागू करते समय, न्यायालय को उस अभियुक्त की भूमिका पर ध्यान केंद्रित करना आवश्यक है जिसका आवेदन विचाराधीन है। तत्काल संदर्भ के लिए, अनुच्छेद 17 और 18 इस प्रकार हैं:

> **"17.** जैसा कि अब तक तय हो चुका है, धारा 45 के तहत निर्दिष्ट शर्तें अनिवार्य हैं। उनका अनुपालन किया जाना चाहिए। न्यायालय को यह संतुष्ट होना चाहिए कि यह मानने के लिए उचित आधार हैं कि अभियुक्त ऐसे अपराध का दोषी नहीं है और जमानत पर रहते हुए उसके द्वारा कोई अपराध करने की संभावना नहीं है। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि अधिनियम की धारा 24 के तहत अनुमत वैधानिक अनुमान के अनुसार, न्यायालय या प्राधिकरण यह मानने का हकदार है कि जब तक विपरीत साबित न हो जाए, अधिनियम के तहत अपराध की आय से संबंधित किसी भी कार्यवाही में, धारा 3 के तहत धन शोधन के अपराध के लिए आरोपित व्यक्ति के मामले में, अपराध की ऐसी आय धन शोधन में शामिल है। पी.एम.एल अधिनियम की धारा 45 में उल्लिखित ऐसी शर्तों का अनुपालन धारा 439 सीआरपीसी के तहत जमानत के लिए किए गए आवेदन के संबंध में भी करना होगा। पी.एम.एल अधिनियम की धारा 71 के तहत वर्तमान में

लागू अन्य कानूनों की तुलना में पीएमएल अधिनियम को दिए गए अधिभावी प्रभाव को देखते हुए।

18. विद्वान वकील श्री लूथरा द्वारा अपीलकर्ता को इस आधार पर जमानत दिए जाने का अनुरोध कि अन्य सह-आरोपियों को भी जमानत दी गई है, स्वीकार नहीं किया जा सकता। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि समानता कानून नहीं है। समानता के सिद्धांत को लागू करते समय, न्यायालय को उस अभियुक्त की भूमिका पर ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता होती है जिसका आवेदन विचाराधीन है। यह विवादित नहीं है कि मुख्य अभियुक्त श्री केवल कृष्ण कुमार, एस.बी.एफ.एल के प्रबंध निदेशक और समूह कंपनियों के के.एम.पी और अन्य अभियुक्त देवकी नंदन गर्ग, विभिन्न शेल कंपनियों के मालिक/संचालक/नियंत्रक को दुर्बलता और चिकित्सा आधार पर जमानत दी गई थी। सह-आरोपी रमन भूरारिया, जो एस.बी.एफ.एल के आंतरिक लेखा परीक्षक थे, को उच्च न्यायालय द्वारा जमानत दी गई है, हालांकि उच्च न्यायालय के उक्त आदेश को प्रतिवादी द्वारा एस.एल.पी (सीआरएल) संख्या 9047/2023 दायर करके इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई है और यह विचाराधीन है। वर्तमान मामले में, उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ता की ओर से किए गए उक्त प्रस्तुतीकरण को खारिज करते हुए, रमन भूरारिया के मामले को अलग किया था और देखा था कि रमन भूरारिया के विपरीत, जो एस.बी.एफ.एल के आंतरिक लेखा परीक्षक (थोड़े समय के लिए एसबीएफएल के वैधानिक लेखा परीक्षक) थे, आवेदक खरीद के उपाध्यक्ष थे और एक उपाध्यक्ष के रूप में, वे कंपनी के दिन-प्रतिदिन के कार्यों के लिए जिम्मेदार थे। यह भी देखा गया कि अपीलकर्ता की भूमिका वित्तीय मामलों से पता चलती है, जहाँ प्रत्यक्ष ऋण निधि को एसबीएफएल की सहयोगी कंपनियों को हस्तांतरित कर दिया गया है, जहाँ अपीलकर्ता या तो शेयरधारक या निदेशक था। किसी भी मामले में, रमन भुरारिया को जमानत देने का आदेश इस न्यायालय की समन्वय पीठ के समक्ष विचाराधीन है, इसलिए हमारे लिए उच्च न्यायालय द्वारा पारित उक्त आदेश के संबंध में कोई टिप्पणी करना उचित नहीं होगा।"

43. अब, अधिनियम, 2002 के विभिन्न प्रावधानों के मुद्दे पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णयों पर चर्चा करने के बाद, यह न्यायालय याचिकाकर्ता के विद्वान वकील की ओर से उठाए गए कानूनी आधारों का जवाब देने के लिए आगे बढ़ रहा है।

44. पहला आधार यह है कि ईसीआईआर पहले ही प्रस्तुत की जा चुकी है, मामला शिकायत मामले में परिवर्तित हो चुका है और इसलिए, इस स्तर पर, प्रवर्तन निदेशालय की ओर से उपस्थित सरकारी अभियोजक को विरोध करने का अधिकार नहीं है। याचिकाकर्ता के विद्वान वकील के अनुसार प्रवर्तन निदेशालय को इस तरह

का अधिकार धारा 19(1) के तहत जमानत मांगने के चरण में है और अब शिकायत पहले ही दर्ज हो चुकी है जिसमें समन जारी किया जा चुका है और अब इसमें न्यायालय और आरोपी व्यक्ति के बीच मामला है, इसलिए, प्रवर्तन निदेशालय को अधिनियम, 2002 की धारा 45(1)(i)(ii) के प्रावधान के आलोक में विरोध करने का कोई अवसर नहीं मिला है।

दूसरा आधार यह लिया गया है कि धारा 19(1) का चरण उसी समय समाप्त हो चुका है जब ई.सी.आई.आर संबंधित न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की गई थी और आधार यह है कि चूंकि ईसीआईआर में परिवर्तित प्रारंभिक जांच के संचालन के दौरान याचिकाकर्ता का सहयोग है, इसलिए इस स्तर पर उसकी कैद अप्रासंगिक होगी और **सतेंद्र कुमार अंतिल बनाम सीबीआई और अन्य** (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर भी भरोसा किया गया है।

45. धारा 19(1) के चरण का आधार यह लिया गया है कि ईसीआईआर तैयार होने के समय यह उपलब्ध नहीं है।

यह न्यायालय इस तर्क से प्रभावित नहीं है, क्योंकि यदि अधिनियम, 2002 की धारा 19(1) के प्रावधान पर विचार किया जाए तो धारा 19(1) में किए गए प्रावधान को लागू करने का कोई चरण नहीं है, बल्कि यह केवल गिरफ्तारी करने की शक्ति प्रदान करना है, यदि यह विश्वास करने का कारण है कि किसी व्यक्ति ने इस अधिनियम के तहत दंडनीय अपराध का दोषी पाया है, तो वह ऐसे व्यक्ति को गिरफ्तार कर सकता है और उसे यथाशीघ्र ऐसी गिरफ्तारी के आधारों की जानकारी देगा।

उपर्युक्त प्रावधान में निर्दिष्ट किया गया है कि ईसीआईआर के पूरा होने के बाद भी किसी भी स्तर पर गिरफ्तारी की शक्ति प्रदान की गई है क्योंकि इस आशय की कोई शर्त नहीं है कि ईसीआईआर के पूरा होने के बाद अधिनियम, 2002 की धारा 19(1) के तहत गिरफ्तारी करने की शक्ति का प्रयोग नहीं किया जा सकता है, बल्कि ऐसे व्यक्ति को गिरफ्तार करते समय शर्तों का पालन किया जाना आवश्यक है, अर्थात यह मानने का कारण कि कोई व्यक्ति इस अधिनियम के तहत दंडनीय अपराध का दोषी है और उपरोक्त कारण को लिखित रूप में दर्ज किया जाना है, जितनी जल्दी हो सके उसे ऐसी गिरफ्तारी के आधारों के बारे में सूचित करें।

गिरफ्तारी के आधार को सूचित करने का उपरोक्त प्रावधान, जिसमें यह भी बताया जाना है कि किस समय तक इसकी सूचना दी जानी है, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **विजय मदनलाल चौधरी एवं अन्य बनाम यूनियन ऑफ इंडिया एवं अन्य** (सुप्रा) के मामले में निर्धारित किया गया है।

उपरोक्त निर्णय के पश्चात, पंकज बंसल बनाम भारत संघ एवं अन्य, 2023 एससीसी ऑनलाइन एससी 1244 के मामले में खंडपीठ ने यह कानून

निर्धारित किया है कि ऐसी गिरफ्तारी का कारण गिरफ्तारी करने से पहले ही बता दिया जाना चाहिए। उक्त निर्णय का प्रासंगिक पैराग्राफ इस प्रकार है:

> **"39.** उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर, वर्ष 2002 के अधिनियम की धारा 19(1) के संवैधानिक और वैधानिक आदेश को सही अर्थ और उद्देश्य देने के लिए, गिरफ्तार व्यक्ति को गिरफ्तारी के आधारों के बारे में सूचित करने के लिए, हम मानते हैं कि यह आवश्यक होगा कि गिरफ्तारी के ऐसे लिखित आधारों की एक प्रति गिरफ्तार व्यक्ति को स्वाभाविक रूप से और बिना किसी अपवाद के प्रदान की जाए। मोइन अख्तर कुरैशी (सुप्रा) में दिल्ली उच्च न्यायालय और छगन चंद्रकांत भुजबल (सुप्रा) में बॉम्बे उच्च न्यायालय के फैसले, जो इसके विपरीत हैं, सही कानून नहीं बनाते हैं। इस मामले में, स्वीकार्य स्थिति यह है कि ईडी के जांच अधिकारी ने केवल अपीलकर्ताओं की गिरफ्तारी के आधारों को पढ़ा या पढ़ने की अनुमति दी और इसे वहीं छोड़ दिया, जिस पर अपीलकर्ताओं ने भी विवाद किया है। चूंकि संचार का यह तरीका संविधान के अनुच्छेद 22(1) और 2002 के अधिनियम की धारा 19(1) के अधिदेश के अनुपालन को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं पाया गया है, इसलिए हमें यह मानने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि उनकी गिरफ्तारी 2002 के अधिनियम की धारा 19(1) के प्रावधानों के अनुरूप नहीं थी। इसके अलावा, जैसा कि पहले ही उल्लेख किया गया है, अपीलकर्ताओं के खिलाफ कार्यवाही में ईडी का गुप्त आचरण, पहली ईसीआईआर के संबंध में अंतरिम संरक्षण प्राप्त करने के तुरंत बाद दूसरी ईसीआईआर दर्ज करके, स्वीकार्य नहीं है क्योंकि यह शक्ति के मनमाने प्रयोग की बू आती है। वास्तव में, अपीलकर्ताओं की गिरफ्तारी और, परिणामस्वरूप, ईडी की हिरासत में उनकी रिमांड और उसके बाद, न्यायिक हिरासत को बरकरार नहीं रखा जा सकता है।"

इसके बाद, **राम किशोर अरोड़ा बनाम प्रवर्तन निदेशालय, 2023 एससीसी ऑनलाइन एससी 1682** के मामले में, उसी पर विचार किया गया है जिसमें याचिकाकर्ता ने यह दलील दी है कि **पंकज बंसल बनाम यूनियन ऑफ इंडिया और अन्य** (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए फैसले का पालन नहीं किया गया है क्योंकि ऐसी गिरफ्तारी से पहले गिरफ्तारी का कारण बताने वाला कोई लिखित संचार नहीं दिया गया है और इस तरह, जमानत के लिए प्रार्थना की गई है। लेकिन माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने उक्त मामले के तथ्यों पर विचार किया जिसमें याचिकाकर्ता को जून, 2023 के महीने में गिरफ्तार किया गया था जबकि पंकज बंसल बनाम भारत संघ और अन्य का फैसला। (सुप्रा) अक्टूबर, 2023 के महीने में आया है, इसलिए माननीय सर्वोच्च न्यायालय की बड़ी पीठ द्वारा

निर्धारित कानून पर भरोसा करते हुए, क्योंकि याचिकाकर्ता को 24 घंटे के भीतर कारण बता दिया गया था और इसलिए, याचिकाकर्ता की नियमित जमानत के लिए प्रार्थना को खारिज कर दिया गया।

इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि अधिनियम, 2002 की धारा 19(1) अधिकारियों की गिरफ्तारी न करने की शक्ति को प्रतिबंधित करके चरणों को काटकर कोई विभाजन नहीं करती है। जमानत देने के लिए, **विजय मदनलाल चौधरी और अन्य बनाम यूनियन ऑफ इंडिया और अन्य** (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून के अनुसार दोहरी शर्तें, **तरुण कुमार बनाम सहायक निदेशक प्रवर्तन निदेशालय** (सुप्रा) के मामले में अनुसरण की गई दोहरी शर्तों की पूर्ति है, अर्थात,

I. लोक अभियोजक को ऐसी रिहाई के लिए आवेदन का विरोध करने का अवसर दिया गया है; और

II. जहां सरकारी वकील आवेदन का विरोध करता है, अदालत संतुष्ट है कि यह मानने के लिए उचित आधार हैं कि वह ऐसे अपराध का दोषी नहीं है और जमानत पर रहते हुए उसके द्वारा कोई अपराध करने की संभावना नहीं है:

46. इसके अलावा, धारा 45(2) जमानत देने के लिए सीमा पर विचार करने का प्रावधान करती है, जो दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के तहत सीमा के अतिरिक्त है, यानी, सीमा जो लाभ प्रदान करते समय विचार की जानी है, या तो सीआरपीसी की धारा 438 या 439 के तहत इस न्यायालय को दिए गए अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में विचार की जानी है।

47. हम यहां गिरफ्तारी-पूर्व जमानत की याचिका पर विचार कर रहे हैं, जिसे सीआरपीसी की धारा 438 के तहत प्रदत्त शक्ति के तहत प्रदान किया जाना है। जहां तक गिरफ्तारी-पूर्व जमानत की प्रार्थना पर विचार करने का सवाल है, कानून अच्छी तरह से स्थापित है, उक्त लाभ प्रदान करने के उद्देश्य से क्या आवश्यकता है, इस पर विचार किया जाना चाहिए।

48. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपने विभिन्न निर्णयों में बार-बार यह तय किया है कि धारा 438 सीआरपीसी के तहत शक्तियां असाधारण प्रकृति की हैं और इन्हें केवल अपवादात्मक मामलों में ही संयम से इस्तेमाल किया जाना चाहिए और इसलिए, अग्रिम जमानत केवल असाधारण परिस्थितियों में ही दी जा सकती है, जहां अदालत का प्रथम दृष्टया यह विचार है कि आवेदक को अपराध में झूठा फंसाया गया है, क्योंकि अग्रिम जमानत देना किसी अपराध की जांच के क्षेत्र में हस्तक्षेप है और इसलिए, अदालत को ऐसी शक्तियों का प्रयोग करते समय सावधानी बरतनी चाहिए।

49. कानून का यह भी स्थापित अर्थ है कि आवेदन को स्वीकार या अस्वीकार करना प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर होना चाहिए और न्यायालय द्वारा इस तरह के प्रयोग को नियंत्रित करने वाला कोई कठोर नियम और कोई कठोर सिद्धांत नहीं है।

50. यहां यह उल्लेख करना उचित है कि अग्रिम जमानत देने संबंधी कानून को माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने सिद्धराम सतलिनप्पा म्हेत्रे बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य (2011) 1 एससीसी 694 में प्रस्तुत किया है, जो गुरुबख्श सिंह सिब्बिया बनाम पंजाब राज्य (1980) 2 एससीसी 565 में प्रस्तुत संविधान पीठ द्वारा विकसित मापदंडों पर उचित विचार-विमर्श के बाद है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए उक्त निर्णय के प्रासंगिक पैराग्राफ नीचे उद्धृत किए जा रहे हैं:-

> **"111.** अग्रिम जमानत देने या न देने के लिए कोई कठोर दिशा-निर्देश या सख्त फार्मूला नहीं दिया जा सकता। हमारा स्पष्ट मत है कि इस संबंध में कठोर और कठोर दिशा-निर्देश देने का कोई प्रयास नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि अग्रिम जमानत देने या न देने के लिए भविष्य की सभी परिस्थितियों और स्थितियों को स्पष्ट रूप से नहीं देखा जा सकता। विधायी मंशा के अनुरूप अग्रिम जमानत देने या न देने को प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर होना चाहिए। जैसा कि सिब्बिया मामले में संविधान पीठ के फैसले में उचित रूप से देखा गया है [(1980) 2 एससीसी 565: 1980 एससीसी (सीआरआई) 465] कि उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय को अपने विवेक का बुद्धिमानी और सावधानी से उपयोग करके धारा 438 सीआरपीसी के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करना चाहिए, जिसके लिए वे अपने लंबे प्रशिक्षण और अनुभव के कारण आदर्श रूप से उपयुक्त हैं। किसी भी स्थिति में, यह विधायी जनादेश है जिसका हम सम्मान करने के लिए बाध्य हैं।
>
> **112.** अग्रिम जमानत से निपटने के दौरान निम्नलिखित कारकों और मापदंडों को ध्यान में रखा जा सकता है:
>
> i. गिरफ्तारी से पहले आरोप की प्रकृति और गंभीरता तथा अभियुक्त की सटीक भूमिका को ठीक से समझा जाना चाहिए;
> ii. आवेदक का पूर्ववृत्त, जिसमें यह तथ्य शामिल है कि क्या अभियुक्त ने पहले किसी संज्ञेय अपराध के संबंध में न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि पर कारावास की सजा काटी है;
> iii. आवेदक के न्याय से भागने की संभावना;
> iv. अभियुक्त द्वारा समान या अन्य अपराधों को दोहराने की संभावना;
> v. जहां आरोप केवल आवेदक को गिरफ्तार करके उसे चोट पहुंचाने या अपमानित करने के उद्देश्य से लगाए गए हैं;
> vi. अग्रिम जमानत देने का प्रभाव विशेष रूप से बहुत बड़ी संख्या में लोगों को प्रभावित करने वाले बड़े परिमाण के मामलों में;

vii. न्यायालयों को अभियुक्त के विरुद्ध उपलब्ध संपूर्ण सामग्री का बहुत सावधानी से मूल्यांकन करना चाहिए। न्यायालय को मामले में अभियुक्त की सटीक भूमिका को भी स्पष्ट रूप से समझना चाहिए। जिन मामलों में अभियुक्त को दंड संहिता, 1860 की धारा 34 और 149 की सहायता से फंसाया जाता है, उन पर न्यायालय को और भी अधिक सावधानी और सतर्कता से विचार करना चाहिए, क्योंकि ऐसे मामलों में अतिशयोक्ति सामान्य ज्ञान और चिंता का विषय है;

viii. अग्रिम जमानत देने की प्रार्थना पर विचार करते समय, दो कारकों के बीच संतुलन बनाना होगा, अर्थात् स्वतंत्र, निष्पक्ष और पूर्ण जांच पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए और अभियुक्त के उत्पीड़न, अपमान और अनुचित हिरासत की रोकथाम होनी चाहिए;

ix. अदालत को गवाह के साथ छेड़छाड़ या शिकायतकर्ता को धमकी की आशंका की उचित आशंका पर विचार करना चाहिए;

x. अभियोजन में तुच्छता पर हमेशा विचार किया जाना चाहिए और जमानत देने के मामले में केवल वास्तविकता के तत्व पर विचार किया जाना चाहिए और अभियोजन की वास्तविकता के बारे में कुछ संदेह होने की स्थिति में, सामान्य घटनाओं के दौरान, अभियुक्त जमानत के आदेश का हकदार है।

114. ये कुछ ऐसे कारक हैं जिन्हें अग्रिम जमानत आवेदनों पर निर्णय लेते समय ध्यान में रखा जाना चाहिए। ये कारक किसी भी तरह से संपूर्ण नहीं हैं, बल्कि ये केवल उदाहरणात्मक प्रकृति के हैं क्योंकि उन सभी स्थितियों और परिस्थितियों को स्पष्ट रूप से कल्पना करना मुश्किल है जिनमें कोई व्यक्ति अग्रिम जमानत के लिए प्रार्थना कर सकता है। यदि संबंधित न्यायाधीश द्वारा रिकॉर्ड पर मौजूद संपूर्ण सामग्री पर विचार करने के बाद विवेकपूर्ण विवेक का प्रयोग किया जाता है, तो जमानत देने या न देने के पक्ष में अधिकांश शिकायतों का समाधान हो जाएगा। विधायिका ने अपने विवेक से इस अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने की शक्ति केवल उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों को सौंपी है। विधायी इरादे के अनुरूप हमें इस तथ्य को स्वीकार करना चाहिए कि विवेक का उचित रूप से प्रयोग किया जाएगा। किसी भी स्थिति में, सत्र न्यायालय या उच्च न्यायालय के विरुद्ध उच्च न्यायालय में जाने का विकल्प हमेशा उपलब्ध है।"

51. **सुशीला अग्रवाल बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली) (2020) 5 एससीसी 1** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ ने दोहराया है कि अग्रिम जमानत के आवेदनों पर निर्णय लेते समय न्यायालयों को अपराध की प्रकृति और गंभीरता तथा आवेदक की भूमिका और मामले के तथ्यों जैसे कारकों द्वारा निर्देशित होना चाहिए।

52. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अनेक निर्णयों में स्पष्ट रूप से माना है कि अग्रिम जमानत पर विचार करते समय न्यायालय का न्यायिक विवेक विभिन्न प्रासंगिक

कारकों द्वारा निर्देशित होगा तथा यह मुख्य रूप से प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा। इस संबंध में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **केंद्रीय जांच ब्यूरो बनाम संतोष कर्नानी एवं अन्य** के मामले में दिए गए निर्णय से संदर्भ लिया जा सकता है, **जो 2023 एससीसी ऑनलाइन एससी 427** में रिपोर्ट किया गया है। त्वरित संदर्भ के लिए उपरोक्त निर्णय के प्रासंगिक पैराग्राफ को नीचे उद्धृत किया जा रहा है:

> **"24.** समय-परीक्षणित सिद्धांत यह है कि अग्रिम जमानत देने या न देने के लिए कोई सख्त फार्मूला लागू नहीं किया जा सकता है। न्यायालय का न्यायिक विवेक विभिन्न प्रासंगिक कारकों द्वारा निर्देशित होगा और यह काफी हद तक प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा। न्यायालय को संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत गारंटीकृत व्यक्ति की स्वतंत्रता और निष्पक्ष और स्वतंत्र जांच की आवश्यकता के बीच एक नाजुक संतुलन बनाना चाहिए, जिसे उसके तार्किक निष्कर्ष पर ले जाना चाहिए। गिरफ्तारी से विनाशकारी और अपरिवर्तनीय सामाजिक कलंक, अपमान, अपमान, मानसिक पीड़ा और अन्य भयावह परिणाम होते हैं। इसके बावजूद, जब न्यायालय, जांच एजेंसी द्वारा एकत्रित सामग्री जानकारी पर विचार करते हुए, प्रथम दृष्टया संतुष्ट होता है कि आरोपी के खिलाफ संदेह की सुई से अधिक कुछ है, तो वह जांच को खतरे में नहीं डाल सकता है, खासकर तब जब आरोप गंभीर प्रकृति के हों।"

53. धारा 19(1), 45(1), 45(2) के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए स्पष्ट है कि सीआरपीसी की धारा 438 या 439 के तहत प्रदत्त शक्ति के प्रयोग में नियमित जमानत का लाभ प्रदान करते समय जिन शर्तों पर विचार किया जाना आवश्यक है, यानी, अधिनियम, 2002 की धारा 45(1) के तहत प्रदान की गई दोहरी शर्तों के अलावा, पूर्व गिरफ्तारी जमानत, धारा 439 या 438 के तहत जमानत प्रदान करते समय जिन शर्तों या आवश्यकता का पालन किया गया है, जैसा भी मामला हो।

इसलिए, इस न्यायालय का विचार है कि चूंकि धारा 19(1) के तहत चरणों का कोई विभाजन नहीं है, इसलिए ईसीआईआर प्रस्तुत करने के बाद, प्राधिकारी गिरफ्तारी करने की अपनी शक्ति जब्त कर लेता है, बल्कि यह सामान्य सिद्धांत के अनुसार अपराध की गंभीरता की प्रकृति पर निर्भर करता है।

जहां तक इस तर्क का सवाल है कि प्रवर्तन निदेशालय की ओर से उपस्थित होने वाले सरकारी वकील को ई.सी.आई.आर. तैयार होने और न्यायालय में प्रस्तुत होने के बाद विरोध करने का कोई अवसर नहीं मिलता है, लेकिन यह न्यायालय धारा 45(1) के प्रावधानों पर विचार करने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि इस आशय का कोई संदर्भ नहीं है कि ई.सी.आई.आर. प्रस्तुत होने के बाद प्रवर्तन निदेशालय की ओर से उपस्थित होने वाले सरकारी वकील को अग्रिम जमानत या

गिरफ्तारी से पूर्व जमानत देने का विरोध करने का कोई अवसर नहीं मिलेगा, बल्कि अधिनियम, 2002 की धारा 45(1) 45(1)(i)(ii) के तहत अवसर प्रदान करती है, अर्थात, सीआरपीसी की धारा 439 या 438 के तहत आदेश पारित करने से पहले सरकारी वकील को अवसर प्रदान करना।

54. अधिनियम, 2002 की धारा 45 की उपधारा (1) (ii) में यह प्रावधान है कि यदि लोक अभियोजक आवेदन का विरोध करता है, तो न्यायालय को यह विश्वास हो जाता है कि यह मानने के लिए उचित आधार हैं कि वह ऐसे अपराध का दोषी नहीं है और जमानत पर रहते हुए उसके द्वारा कोई अपराध किए जाने की संभावना नहीं है, अर्थात संबंधित न्यायालय को इस बात का अनुपालन करना होगा कि यह विश्वास करने के लिए संतुष्टि होना आवश्यक है कि ऐसा अभियुक्त व्यक्ति ऐसे अपराध का दोषी नहीं है और जमानत पर रहते हुए उसके द्वारा कोई अपराध किए जाने की संभावना नहीं है।

55. उपरोक्त तथ्य की पुष्टि केवल जांच के दौरान सामने आई सामग्री से ही हो सकती है, जिसके आधार पर ईसीआईआर तैयार की जानी है। प्रवर्तन निदेशालय की ओर से पेश होने वाले सरकारी वकील की शक्ति में कटौती को स्वीकार्य नहीं कहा जा सकता, क्योंकि यह सरकारी वकील को विरोध करने का अवसर प्रदान करने के प्रमुख सिद्धांत पर आधारित है।

इस तरह के अवसर का एक और उद्देश्य यह है कि न्यायालय अभियुक्त और सरकारी वकील की सुनवाई के बाद किसी निर्णायक निष्कर्ष पर पहुंच सके।

56. कानून में यह बात स्पष्ट रूप से स्थापित है कि यदि कानून में कोई अस्पष्टता नहीं है तो उसमें कोई शब्द नहीं जोड़ा जा सकता अथवा कानून की अपनी तरह से व्याख्या नहीं की जा सकती। इस संबंध में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **आर.एस. नायक बनाम ए.आर. अंतुले, (1984) 2 एससीसी 183** में दिए गए निर्णय का संदर्भ लिया जाना चाहिए, जिसमें पैराग्राफ-18 में यह टिप्पणी की गई है जो इस प्रकार है:

> **"18.** (क) के बारे में: 1947 का अधिनियम, जैसा कि इसके लंबे शीर्षक से पता चलता है, रिश्वतखोरी और भ्रष्टाचार की रोकथाम के लिए अधिक प्रभावी प्रावधान करने के लिए अधिनियमित किया गया था। इसलिए, निस्संदेह, अधिनियम के प्रावधानों को न्यायालय द्वारा इस तरह से व्याख्यायित किया जाना चाहिए जो अधिनियम के अंतर्निहित उद्देश्य और प्रयोजन को आगे बढ़ाए और किसी भी तरह से इसे विफल न करे। यदि क़ानून के शब्द स्पष्ट और असंदिग्ध हैं, तो प्रावधान में प्रयुक्त शब्दों के स्वाभाविक अर्थ को प्रभावी करना न्यायालय का सबसे स्पष्ट कर्तव्य है। व्याख्या का प्रश्न केवल अस्पष्टता की स्थिति में उठता है या क़ानून में प्रयुक्त शब्दों का स्पष्ट अर्थ

स्वयं को पराजित करने वाला होगा। न्यायालय को यह पता लगाने का अधिकार है कि अस्पष्टता को दूर करने के लिए विधानमंडल का इरादा क्या है, यह ध्यान में रखते हुए कि क़ानून को अधिनियमित करते समय क्या शरारत थी और जिसे दूर करने के लिए विधानमंडल ने क़ानून को अधिनियमित किया। निर्माण का यह नियम इतना सर्वमान्य है कि इसे पूर्व उदाहरणों द्वारा समर्थित करने की आवश्यकता नहीं है। निर्माण के इस नियम को अपनाते हुए, जब भी अस्पष्टता पर निर्माण का प्रश्न उठता है या जहां किसी प्रावधान के बारे में दो दृष्टिकोण संभव हैं, तो न्यायालय का यह कर्तव्य होगा कि वह उस निर्माण को अपनाए जो अधिनियम के अंतर्निहित उद्देश्य को आगे बढ़ाए, अर्थात रिश्वतखोरी और भ्रष्टाचार की रोकथाम के लिए प्रभावी प्रावधान करना और किसी भी कीमत पर इसे विफल नहीं करना।

इसके अलावा, **डॉ. (मेजर) मीता सहाय बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, (2019) 20 एससीसी 17** के मामले में, पैराग्राफ-20 में यह माना गया है, जो इस प्रकार है:

"20. यह वैधानिक व्याख्या का एक स्थापित सिद्धांत है कि पहले कदम के रूप में, न्यायालयों को प्रावधान के पाठ की व्याख्या करनी चाहिए और इसे शाब्दिक रूप से बनाना चाहिए। किसी क़ानून में प्रावधानों को उनके मूल व्याकरणिक अर्थ में पढ़ा जाना चाहिए ताकि उसके शब्दों को एक सामान्य शाब्दिक अर्थ दिया जा सके। हालाँकि, व्याख्या का यह उपकरण केवल उन मामलों में लागू किया जा सकता है जहाँ अधिनियम का पाठ केवल एक ही अर्थ के लिए अतिसंवेदनशील हो। [नाथी देवी बनाम राधा देवी गुप्ता, (2005) 2 एससीसी 271, पैरा 13.] फिर भी, ऐसी स्थिति में जहाँ पाठ के अर्थ में अस्पष्टता है, न्यायालयों को की गई व्याख्या के परिणामों पर भी उचित ध्यान देना चाहिए।"

57. इस तरह के स्थापित कानून का उद्देश्य यह है कि यदि अधिनियम में किसी कार्य को करने का प्रावधान है, तो उसे प्रावधान के अनुसार ही किया जाना चाहिए। इस संबंध में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **उत्तर प्रदेश राज्य बनाम सिंघारा सिंह एवं अन्य, एआईआर (1964) एससी 358** में दिए गए निर्णय का संदर्भ लिया जाना चाहिए, जिसमें पैराग्राफ-8 में निम्नलिखित निर्णय दिया गया है:

8. "....इसका परिणाम यह है कि यदि किसी क़ानून ने कोई कार्य करने की शक्ति प्रदान की है और उस शक्ति का प्रयोग करने की विधि निर्धारित की है, तो यह अनिवार्य रूप से उस कार्य को निर्धारित तरीके के अलावा किसी अन्य तरीके से करने पर रोक लगाता है। नियम के पीछे सिद्धांत यह है कि यदि ऐसा नहीं होता, तो वैधानिक प्रावधान अधिनियमित ही नहीं किया गया होता...."

बाबू वर्गीस एवं अन्य बनाम बार काउंसिल ऑफ केरल एवं अन्य के मामले में, (1999) 3 एससीसी 422 में रिपोर्ट किया गया, जिसमें पैराग्राफ संख्या 31 और 32 में निम्नानुसार निर्णय दिया गया है:

> **"31.** यह कानून का बुनियादी सिद्धांत है जो लंबे समय से स्थापित है कि यदि किसी विशेष कार्य को करने का तरीका किसी क़ानून के तहत निर्धारित है, तो उस कार्य को उसी तरीके से किया जाना चाहिए या बिल्कुल नहीं किया जाना चाहिए। इस नियम की उत्पत्ति टेलर बनाम टेलर के निर्णय से पता चलती है, जिसका अनुसरण लॉर्ड रोश ने नज़ीर अहमद बनाम किंग एम्परर में किया था, जिन्होंने निम्नलिखित कहा:
>
> > "जहाँ किसी निश्चित कार्य को निश्चित तरीके से करने की शक्ति दी जाती है,वह कार्य उसी तरीके से किया जाना चाहिए या बिल्कुल नहीं किया जाना चाहिए।"
>
> **32.** इस नियम को इस न्यायालय ने राव शिव बहादुर सिंह बनाम वी.पी. राज्य और फिर दीप चंद बनाम राजस्थान राज्य में अनुमोदित किया है। इन मामलों पर इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने यू.पी. राज्य बनाम सिंघारा सिंह में विचार किया और नजीर अहमद मामले में निर्धारित नियम को फिर से बरकरार रखा। इस नियम को तब से न्यायालयों द्वारा अधिकार क्षेत्र के प्रयोग पर लागू किया गया है और इसे प्रशासनिक कानून के वैधानिक सिद्धांत के रूप में भी मान्यता दी गई है।"

इसके अलावा, **आयकर आयुक्त, मुंबई बनाम अंजुम एम.एच. घासवाला एवं अन्य के मामले में, (2002) 1 एससीसी 633** में रिपोर्ट किया गया, जिसमें पैराग्राफ 27 में निम्नानुसार माना गया है:

> "..... यह विचार का एक सामान्य नियम है कि जब कोई क़ानून किसी प्राधिकरण को किसी विशेष तरीके से प्रयोग करने के लिए कुछ शक्ति प्रदान करता है, तो उक्त प्राधिकरण को इसका प्रयोग केवल क़ानून में दिए गए तरीके से ही करना होता है...."

इसी प्रकार, **झारखंड राज्य एवं अन्य बनाम अम्बे सीमेंट्स एवं अन्य के मामले में, (2005) 1 एससीसी 368** में रिपोर्ट किया गया, जिसमें पैराग्राफ 26 में निम्नानुसार माना गया है:

> "....यह व्याख्या का मुख्य नियम है कि जहां कोई क़ानून यह प्रावधान करता है कि कोई विशेष चीज़ की जानी चाहिए, उसे निर्धारित तरीके से किया जाना चाहिए, किसी अन्य तरीके से नहीं। यह [15] व्याख्या का भी स्थापित नियम है कि जहां कोई क़ानून दंडात्मक प्रकृति का है, उसे सख्ती से समझा जाना चाहिए और उसका पालन किया जाना चाहिए....."

58. इसलिए, इस न्यायालय का यह मत है कि याचिकाकर्ता के विद्वान वकील की ओर से जो तर्क दिया गया है कि जिस क्षण ईसीआईआर प्रस्तुत किया गया है, सरकारी अभियोजक के पास विरोध करने का कोई अवसर नहीं होगा, उसका कोई आधार नहीं है।

59. उपरोक्त कानूनी मुद्दों पर चर्चा करने के बाद, यह न्यायालय इस विचार पर है कि मामले का परीक्षण इस आधार पर किया जाना चाहिए कि अधिनियम, 2002 की धारा 45 के तहत प्रदान की गई दोहरी शर्तों की पूर्ति, अर्थात, लोक अभियोजक को ऐसी रिहाई के लिए आवेदन का विरोध करने का अवसर दिया गया है; और जहां लोक अभियोजक आवेदन का विरोध करता है, क्या अदालत इस बात से संतुष्ट है कि यह मानने के लिए उचित आधार हैं कि वह ऐसे अपराध का दोषी नहीं है और जमानत पर रहते हुए उसके द्वारा कोई अपराध करने की संभावना नहीं है।

60. इस न्यायालय को इस बात पर निर्णायक निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कि क्या याचिकाकर्ता इन मानदंडों/आधारों को पूरा कर रहा है, ईसीआईआर की तैयारी के दौरान एकत्र किए गए साक्ष्यों का उल्लेख करने की आवश्यकता है जो इस प्रकार हैं:

> **"5. पीएमएलए के तहत अपराध की जांच:**
>
> **5.2** जांच के दौरान, वी के राम द्वारा अपने कार्यकाल के दौरान अर्जित अवैध धन का पता लगाने के दौरान, यह पाया गया है कि वीरेंद्र कुमार राम की पत्नी और पिता के बैंक खातों में बड़ी मात्रा में धनराशि प्राप्त हुई है, सबसे पहले राजकुमारी और वीरेंद्र कुमार राम के संयुक्त खाते (2577257010412) में वित्तीय वर्ष 2014-15 से वित्तीय वर्ष 2018-19 की अवधि के दौरान लगभग 9.30 करोड़ रुपये, और फिर उनके पिता गेंदा राम के खाते में 21.12.22 से 23.01.23 तक 31-32 दिनों की अवधि में 4.5 करोड़ रुपये की राशि, उक्त राशि दिल्ली स्थित सीए मुकेश मित्तल (आरोपी) के कर्मचारियों/रिश्तेदारों के बैंक खातों से स्थानांतरित की गई थी। ऐसे नकली बैंक खाते (मुकेश मित्तल के रिश्तेदार और कर्मचारी के) ने कुछ फर्जी बैंक खातों या काल्पनिक व्यक्तियों के बैंक खातों से धनराशि प्राप्त करने के बाद गेंदा राम के बैंक खातों में धनराशि स्थानांतरित कर दी।
>
> **5.3.2 धन के स्रोत के संबंध में जांच:**
>
> **(i)** आरपी इन्वेस्टमेंट एंड कंसल्टेंसी (प्रोप. रीना पाल) और आरके इन्वेस्टमेंट एंड कंसल्टेंसी (प्रोप. राकेश कुमार केडिया) दोनों के खाता खोलने के फॉर्म, केवाईसी दस्तावेजों और बैंक खाता विवरणों का विश्लेषण किया गया है। इसके अलावा, इन फर्मों के मालिकों के बयान भी दर्ज किए गए, जिसमें यह पता चला कि रीना पाल विजय कुमार पाल की पत्नी और मेसर्स आरपी इन्वेस्टमेंट एंड कंसल्टेंसी की

प्रोपराइटर हैं और विजय पाल मुकेश मित्तल के कर्मचारी हैं। यह ध्यान देने योग्य है कि, फील्ड सत्यापन में, आरपी इन्वेस्टमेंट कंसल्टेंसी के किसी भी व्यावसायिक पते पर ऐसा कोई व्यवसाय संचालन नहीं पाया गया। विजय पाल ने अपने बयान में खुलासा किया है कि उन्होंने मुकेश मित्तल (आरोपी संख्या 5) के निर्देश पर मेसर्स आरपी इन्वेस्टमेंट एंड कंसल्टेंसी (प्रोप: रीना पाल) के नाम से ऐसा बैंक खाता खोला और इस बैंक खाते का संचालन मुकेश मित्तल द्वारा ही किया जाता था। रीना पाल और विजय पाल के आवास पर भी पीएमएलए की धारा 17 के तहत तलाशी ली गई, जिसमें रीना पाल ने पीएमएलए की धारा 17 के तहत दर्ज अपने बयान में अपने नाम पर किसी भी फर्म या ऐसी फर्म के नाम पर संचालित किसी भी बैंक खाते की जानकारी होने से इनकार किया। उसने बस इतना कहा कि उसके पति विजय पाल उसके सभी वित्तीय लेन-देन को संभालते थे। इसके अलावा, क्षेत्रीय जांच के दौरान आरके इन्वेस्टमेंट एंड कंसल्टेंसी के नाम पर व्यापारिक संचालन का पता नहीं लगाया जा सका। राकेश कुमार केडिया के आवासीय परिसर में पीएमएलए की धारा 17 के तहत तलाशी अभियान चलाया गया और उसने पीएमएलए की धारा 17 के तहत दर्ज अपने बयान में खुलासा किया कि उसके बैंक खाते को उसके रिश्तेदार मुकेश मित्तल द्वारा नियंत्रित किया जा रहा है और उसे अपने नाम पर मौजूद किसी भी फर्म के बारे में पता नहीं है। राकेश कुमार केडिया की स्वामित्व वाली फर्म मेसर्स आरके इन्वेस्टमेंट्स एंड कंसल्टेंसी का बैंक खाता संख्या 2577214000002 केनरा बैंक में है और इसके खाता खोलने के फॉर्म में मुकेश मित्तल का मोबाइल नंबर 7011929771 दर्ज है, जो दर्शाता है कि इस खाते के माध्यम से किए गए उच्च मूल्य के ऑनलाइन बैंकिंग हस्तांतरण वास्तव में मुकेश मित्तल द्वारा किए गए थे। इस प्रकार, यह बहुत स्पष्ट है कि आरके इन्वेस्टमेंट एंड कंसल्टेंसी और आरपी इन्वेस्टमेंट एंड कंसल्टेंसी केवल डमी संस्थाएं हैं, जिनके नाम पर कोई व्यावसायिक अस्तित्व नहीं है और उनके बैंक खातों को मुकेश मित्तल द्वारा नियंत्रित और उपयोग किया जाता था ताकि वीरेंद्र कुमार राम द्वारा अर्जित अपराध की आय को राजकुमारी के बैंक खातों में एकीकृत किया जा सके।

(ii) वीरेंद्र कुमार राम (आरोपी संख्या 1) ने पीएमएलए 2002 की धारा 50 के तहत दर्ज अपने बयान में कहा है कि वह 2015 से 2020 तक 25-50 लाख रुपये की नकदी ट्रेन से दिल्ली ले जाता था और इसे मुकेश मित्तल (आरोपी संख्या 5) को देता था, जिसने अपना कमीशन काटने के बाद शेष राशि अपनी पत्नी राजकुमारी (आरोपी संख्या 3) के साथ अपने संयुक्त बैंक खाते में स्थानांतरित कर दी थी। उक्त नकदी के बदले मुकेश मित्तल (आरोपी संख्या 5) अपनी पत्नी राजकुमारी के बैंक खाते में प्रविष्टियां करता था। श्री वी.के. राम ने यह भी कहा कि उक्त धनराशि निविदाओं के आवंटन के बदले

विभिन्न ठेकेदारों से प्राप्त कमीशन थी। इसके अलावा, उक्त अवधि के दौरान, यह देखा गया है कि वीरेंद्र कुमार राम ने कई बार दिल्ली की यात्रा की है।

(iii) पीएमएलए जांच के दौरान, वीरेंद्र कुमार राम ने पीएमएलए की धारा 50 के तहत कहा कि 2013-14 में, श्री तिवारी, सीए ने उन्हें सीए मित्तल से मिलवाया; उन्होंने आगे कहा कि श्री तिवारी उस समय सीए मित्तल के अधीन काम कर रहे थे; इसके अलावा, उन्होंने कहा कि जवाहर लाल सिंह, सहायक अभियंता जो उनके अधीन काम कर रहे थे, उनके बेटे अजीत सिंह ने उन्हें श्री तिवारी से मिलवाया; उन्होंने बाद में कहा कि अजीत सिंह उनके बहुत करीबी हैं। जांच के दौरान, यह स्पष्ट हो गया कि श्री तिवारी, सीए हृदया नंद तिवारी हैं और श्री मित्तल, सीए मुकेश मित्तल हैं।

(iv) मुकेश मित्तल ने दिनांक 11.07.2023 को अपने बयान में कहा कि हृदया नन्द तिवारी (आरोपी संख्या 10) अजीत सिंह और वीरेन्द्र कुमार (आरोपी संख्या 1) को अपने कार्यालय में लाया और उन्हें (वी.के. राम की अपराध आय को सफेद करने के उद्देश्य से) पेश किया। इसके अलावा मुकेश मित्तल ने पीएमएलए की धारा 50 के तहत दर्ज अपने बयान दिनांक 29.03.2023 में कहा कि राजकुमारी और गेंदा राम (आरोपी संख्या 4) के बैंक खातों को झारखंड के हृदया नंद तिवारी (आरोपी संख्या 10) द्वारा संचालित किया जाता था, जो बाद में उनकी फर्म एम. मित्तल एंड कंपनी में भागीदार बन गया। उन्होंने यह भी कहा कि हृदया नंद तिवारी ने 2019 तक उक्त फर्म में काम किया। केनरा बैंक में राजकुमारी के बैंक खाते संख्या 2577257010412 से पता चलता है कि 05.04.2019 को हृदया नंद तिवारी को 5 लाख रुपये का भुगतान किया गया है।

(v) आगे की जांच के दौरान, हृदया नन्द तिवारी (आरोपी संख्या 10) का बयान पी.एम.एल.ए 2002 की धारा 50 के तहत 11.07.2023 और 12.07.2023 को दर्ज किया गया, जिसमें उसने अन्य बातों के साथ-साथ कहा कि उसने फरवरी 2010 में एम. मित्तल एंड कंपनी में काम करना शुरू किया और मार्च 2010 से 10% शेयरहोल्डिंग के साथ भागीदार बन गया। उसने मार्च 2020 में एम. मित्तल एंड कंपनी छोड़ दी। उसने आगे कहा कि उसने अपने दोस्त अजीत सिंह और वीरेंद्र कुमार राम को वर्ष 2014 में मुकेश मित्तल से आयकर रिटर्न दाखिल करने और वीरेंद्र कुमार राम की नकद राशि के खिलाफ आरटीजीएस प्रविष्टियों की व्यवस्था करने के लिए मिलवाया था। उसने कहा कि वह अपने करीबी दोस्त अजीत सिंह के माध्यम से वीरेंद्र कुमार राम को जानता है। अजीत सिंह ने उसे बताया था कि वीरेंद्र कुमार राम उसके चाचा हैं और झारखंड में इंजीनियर के रूप में काम करते हैं। उन्होंने यह भी कहा कि मुकेश मित्तल ने वीरेंद्र कुमार राम के संबंध में उनकी आवश्यकता के अनुसार आर.टी.जी.एस. प्रविष्टियां कीं, जिसके लिए उनके

बीच एक बैठक हुई तथा प्रविष्टियां प्रदान करने के लिए 1.5% कमीशन तय किया गया। उन्होंने यह भी कहा कि मुकेश मित्तल अपने पिता स्वर्गीय बाबू लाल मित्तल के साथ मेसर्स आर.पी. इन्वेस्टमेंट एंड कंसल्टेंसी (प्रोप रीना पाल) के बैंक खाते का संचालन करते थे, जिसका उपयोग वीरेंद्र कुमार राम को प्रविष्टियां प्रदान करने के लिए किया जाता था। उन्होंने यह भी कहा कि वीरेंद्र कुमार राम और/या उनके व्यक्ति एम. मित्तल एंड कंपनी के कार्यालय में 10 से 15 लाख रुपये के लॉट में नकद वितरित करते थे, जिसे स्वर्गीय बाबू लाल मित्तल (मुकेश मित्तल के पिता)/मुकेश मित्तल या उनकी अनुपस्थिति में विजय पाल (रीना पाल के पति) द्वारा प्राप्त किया जाता था। प्रविष्टियाँ मेसर्स आर के इन्वेस्टमेंट एंड कंसल्टेंसी, मुकेश मित्तल के रिश्तेदार प्रोप राकेश केडिया और मेसर्स आरपी इन्वेस्टमेंट एंड कंसल्टेंसी, मुकेश मित्तल की कर्मचारी पत्नी प्रोप रीना पाल के बैंक खातों के माध्यम से प्रदान की गई।

(xiv) **<u>मनीष के बैंक खाते से प्राप्त धनराशि:</u>**

जांच के दौरान पता चला कि मनीष के कैनरा बैंक खाता संख्या 127000590839 से 1.87 करोड़ रुपये की धनराशि गेंदा राम के बैंक खाते में स्थानांतरित की गई है, जिसका उपयोग गेंदा राम पिता वीके राम द्वारा सतबारी, साकेत, नई दिल्ली में संपत्ति खरीदने के लिए किया गया था। उसने अपने खाते से 5 लाख रुपये गेंदा राम के दूसरे बैंक खाते संख्या 110089477752 में भी स्थानांतरित किए थे। मनीष के आवास की तलाशी ली गई, जो मुकेश मित्तल के ड्राइवर किशन का बेटा निकला। उसने 21.02.2023 को पीएमएलए की धारा 17 के तहत दर्ज अपने बयान में अन्य बातों के साथ-साथ कहा कि वह बी.कॉम तृतीय वर्ष का छात्र है; उसके पिता मुकेश मित्तल के ड्राइवर हैं; उन्हें केनरा बैंक में अपने ऐसे किसी भी बैंक खाते के बारे में जानकारी नहीं है। उन्होंने बैंक खातों से संबंधित कुछ दस्तावेजों पर हस्ताक्षर किए हैं। जब भी उनके पिता ने उनसे ऐसा करने के लिए कहा, तो उन्होंने कुछ खाली चेक पर भी हस्ताक्षर किए। उनके पिता मुकेश मित्तल के निर्देश पर काम कर रहे थे। उन्होंने आगे कहा कि उनका आईटीआर मुकेश मित्तल द्वारा दाखिल किया गया था, हालांकि उनकी कोई आय नहीं है। वह गेंदा राम को नहीं जानते।

<u>5.5 मुकेश मित्तल द्वारा वीरेंद्र कुमार राम से कमीशन फोरम में प्राप्त पी.ओ.सी.</u>

5.5.3 इस प्रकार कुल मिलाकर मुकेश मित्तल को वीरेंद्र कुमार राम से 5 करोड़ रुपए नकद यानी अपराध की आय प्राप्त हुई, जिसमें से 4.59 करोड़ रुपए गेंदा राम के दो बैंक खातों में जमा (आवास प्रविष्टियां) किए गए, 2

लाख रुपए हृदया नंद तिवारी को दिए गए और 4.5 लाख रुपए कमीशन के तौर पर राम प्रकाश भाटिया को दिए गए। शेष 34.5 लाख रुपए में से 50 हजार रुपए रवि वाधवानी को दिए गए, 16 लाख रुपए मुकेश मित्तल ने वापस किए और उसे वीरेंद्र कुमार राम के एक व्यक्ति ने वसूला और अंत में 18 लाख रुपए मुकेश मित्तल के पास रह गए। इसके अलावा गेंदा राम के बैंक खातों में जमा 4.59 करोड़ रुपए में से 1.5 लाख रुपए गेंदा राम के बैंक खातों में जमा किए गए। 19.01.2023 को गेंदा राम के बैंक खाते 127000628767 से एम. मित्तल एंड कंपनी के बैंक खाते में 04 लाख रुपये भी ट्रांसफर किए गए। इस प्रकार, मुकेश मित्तल ने अकेले वीरेंद्र कुमार राम से 22 लाख रुपये प्राप्त किए जो वास्तव में अपराध की आय है।

5.5.4 मुकेश मित्तल के कर्मचारी विजय पाल ने दिनांक 29.02.2023 को पीएमएलए की धारा 50 के तहत दर्ज अपने बयान में कहा कि उसने वीरेंद्र कुमार राम को गेंदा राम के नाम से दो बैंक खाते खोलने में मदद की और उसने राकेश कुमार उर्फ राकेश कुमार केडिया और मनीष के बैंक खाते खोलने में भी मदद की। उसने यह भी कहा कि राम प्रकाश भाटिया की ओर से राकेश कुमार, नेहा श्रेष्ठ और मनीष के बैंक खाते में किए गए आरटीजीएस लेनदेन की पुष्टि के बाद वह गेंदा राम के बैंक खाते में राशि जमा करता था।

5.5.5 इस प्रकार, मुकेश मित्तल को 9.4 करोड़ रुपये के सौदे से 14 लाख रुपये और 4.59 करोड़ रुपये के सौदे से 22 लाख रुपये मिले। इसके अलावा, हृदया नन्द तिवारी, मुकेश मित्तल और उनके सहयोगियों के बयानों को सारांशित करते हुए, यह स्थापित होता है कि मुकेश मित्तल को 36 लाख रुपये का कमीशन मिला था, जो उसने अपनी सेवाएँ प्रदान करने के लिए वीरेंद्र कुमार राम से प्राप्त किया था और यह अपराध की आय है।

5.5.6 इसके अलावा, मुकेश मित्तल द्वारा वीरेंद्र कुमार राम से प्राप्त अपराध की आय को कुर्क करने के लिए, उनकी (मुकेश मित्तल की) रु. 35,77,117.94/- की संपत्ति, जिसका विवरण नीचे दिया गया है, को इस निदेशालय द्वारा पीएमएलए, 2002 की धारा 5 (1) के अंतर्गत 03.08.2023 को अनंतिम कुर्की आदेश संख्या 04/2023 के तहत अनंतिम रूप से कुर्क किया गया था और यह निदेशालय पीएमएलए, 2002 की धारा 8(5) के तहत इसे जब्त करने की प्रार्थना करता है।

	संपत्ति का विवरण	रकम	मालिक का नाम
1.	मुकेश मित्तल के नाम पर 32,62,187 रुपये की सावधि जमा, जिसका खाता संख्या 140080982035 है और जो केनरा बैंक में है।	रु 32,62,187/-	मुकेश मित्तल
2.	केनरा बैंक में मुकेश मित्तल के खाते में 1,94,363.27 रुपये जमा हैं, खाता संख्या 50100084763092	रु 1,94,363.27/-	मुकेश मित्तल
3.	केनरा बैंक में मुकेश मित्तल के खाता संख्या 4138132000001 में 1,20,567.67 रुपये जमा हैं।	रु 1,20,567.67/-	मुकेश मित्तल
कुल =		रु 35,77,117.94/-	

9.2 <u>परस्पर जुड़े लेन-देन में अनुमान:</u>

ii) इस मामले में, यह स्थापित है कि मुकेश मित्तल ने गेंदा राम के बैंक खातों में 4.59 करोड़ रुपये की प्रविष्टि प्रदान की है, जो वास्तव में टेंडरों के आवंटन के लिए कमीशन एकत्र करने के माध्यम से वीरेंद्र कुमार राम द्वारा एकत्रित अपराध की आय थी। मुकेश मित्तल ने धारा 50 के तहत अपने बयान में कहा कि उन्होंने प्रविष्टि के लिए राम प्रकाश भाटिया को लगभग 4.75 करोड़ रुपये नकद दिए हैं और यह वीरेंद्र कुमार राम का गलत तरीके से कमाया गया पैसा था। हालांकि, राम प्रकाश भाटिया ने स्वीकार किया है कि उन्होंने मुकेश मित्तल द्वारा प्रदान किए गए बैंक खातों में प्रविष्टियों के लिए दिसंबर 2022 से जनवरी 2023 की अवधि के बीच मुकेश मित्तल से केवल 4 करोड़ रुपये की नकद राशि प्राप्त की थी। इस प्रकार, पीएमएलए की धारा 23 के मद्देनजर, यह माना जाता है कि राम प्रकाश भाटिया ने राकेश कुमार केडिया, मनीष और नेहा श्रेष्ठ के बैंक खातों में 4.545 करोड़ रुपये (4.5 लाख रुपये की नकद जमा को छोड़कर) की पूरी प्रविष्टियां प्रदान की थीं, जो अंततः वीरेंद्र कुमार राम के पिता गेंदा राम के बैंक खातों में पहुंच गईं।

iii) इसके अलावा, यह भी कहा गया है कि 4.59 करोड़ रुपये में से 3.52 करोड़ रुपये की लॉन्डरिंग तारा चंद के चार बैंक खातों से वी.के. राम और उनके परिवार के सदस्यों के लिए की गई और इन चार बैंक खातों से

कुल 122 करोड़ रुपये निकाले गए। इसलिए, शेष पीओसी के लिए 118.48 करोड़ रुपये (122-3.52) की राशि के लिए पीएमएलए की धारा 23 के तहत अनुमान लागू होता है।

11. <u>अभियुक्त का आचरण:-</u>

11.1 अभियुक्त संख्या 5 (मुकेश मित्तल):
प्रवर्तन निदेशालय द्वारा अभियुक्त व्यक्ति के आवासीय परिसर में 21.02.2023 को की गई तलाशी कार्यवाही के दौरान, श्री मुकेश मित्तल ने वीरेंद्र कुमार राम द्वारा अर्जित अपराध की आय 9.31 करोड़ के बारे में तथ्य न बताकर असहयोग दिखाया। उसने गेंदा राम के नाम पर बैंक खाते भी खोले, जिसमें उसने अपने और गेंदा राम के बीच जाली किराया समझौता तैयार किया, ताकि बैंक खाता खोलने के लिए पते के प्रमाण के रूप में इसका इस्तेमाल किया जा सके। उसने अपने कर्मचारी विजय पाल को आर के इन्वेस्टमेंट एंड कंसल्टेंसी और आरपी इन्वेस्टमेंट एंड कंसल्टेंसी जैसी नकली संस्थाओं के नाम पर बैंक खाते खोलने के लिए कहा, जिनके खातों का इस्तेमाल वी.के. राम के पीओसी को वैध बनाने के लिए किया गया। इस प्रकार वह जालसाजी करने और धन शोधन के लिए इस तरह के कृत्य का इस्तेमाल करने की आदत में है।

61. ई.सी.आई.आर की तैयारी के दौरान सामने आई उपरोक्त सामग्री से यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता न केवल इसमें शामिल है, बल्कि उसकी प्रत्यक्ष संलिप्तता है। इसके अलावा, यह भी पता चला है कि आरोपी वीरेंद्र कुमार राम, एक लोक सेवक द्वारा निविदाओं के आवंटन के बदले कमीशन/रिश्वत के रूप में अर्जित अपराध की आय का एक हिस्सा और उक्त रिश्वत का पैसा दिल्ली स्थित सीए मुकेश मित्तल (याचिकाकर्ता) द्वारा मुकेश मित्तल के कर्मचारियों/रिश्तेदारों के बैंक खातों की मदद से वीरेंद्र कुमार राम के परिवार के सदस्यों के बैंक खातों में भेजा जा रहा था।

यह भी स्पष्ट है कि वीरेंद्र कुमार राम वर्तमान याचिकाकर्ता को नकद राशि देते थे, जो अन्य प्रविष्टि प्रदाताओं की मदद से अपने कर्मचारियों और रिश्तेदारों के बैंक खातों में प्रविष्टियां लेता था और फिर याचिकाकर्ता (मुकेश मित्तल) द्वारा इस धनराशि को सह-आरोपी राजकुमारी (वीरेंद्र कुमार राम की पत्नी) और गेंदा राम (वीरेंद्र कुमार राम के पिता) के बैंक खातों में स्थानांतरित कर दिया जाता था।

इसके अलावा, यह भी स्पष्ट है कि जाली दस्तावेजों के आधार पर (दिल्ली में) खोले गए कुछ बैंक खातों का भी इस्तेमाल इस तरह के फंड के लेन-देन में किया जा रहा था। इससे पता चलता है कि आरोपी तारा चंद नीरज मित्तल के निर्देश पर राम प्रकाश भाटिया (जिन्हें याचिकाकर्ता वीरेंद्र कुमार राम की नकदी सौंपता था) से नकदी एकत्र करता था और उसे राम प्रकाश भाटिया द्वारा उपलब्ध

कराए गए राकेश कुमार केडिया, मनीष और नेहा श्रेष्ठ के बैंक खातों में स्थानांतरित करता था।

इसके अलावा, यह पता चला है कि एक अन्य आरोपी तारा चंद ने फर्जी दस्तावेजों यानी आधार और पैन कार्ड के जरिए एक काल्पनिक व्यक्ति के नाम पर बैंक खाते खोले और इन बैंक खातों का उपयोग आवास प्रविष्टियां प्रदान करने के लिए किया गया, जो कुछ बैंक खातों में रूट होने के बाद सह-आरोपी गेंदा राम के बैंक खातों में पहुंच गए।

62. अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों पर सम्पूर्ण रूप से विचार करने के पश्चात प्रथम दृष्टया यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता के विरुद्ध विशिष्ट आरोप हैं कि याचिकाकर्ता ने जानबूझकर वीरेंद्र कुमार राम की सहायता की, जो रिश्वत के धन को सफेद करने के लिए प्रथम अभियोजन शिकायत में आरोपी है, जो उसने एक लोक सेवक होने के नाते कमीशन/रिश्वत की राशि से एकत्रित किया था।

उक्त धनराशि याचिकाकर्ता, जो दिल्ली स्थित सीए है, द्वारा याचिकाकर्ता के कर्मचारियों/रिश्तेदारों के बैंक खातों की मदद से वीरेंद्र कुमार राम के परिवार के सदस्यों के बैंक खातों में भेजी जा रही थी।

इसके अलावा यह भी पता चला है कि वीरेंद्र कुमार राम याचिकाकर्ता को नकद राशि देता था, जो अन्य प्रविष्टि प्रदाताओं की मदद से अपने कर्मचारियों और रिश्तेदारों के बैंक खातों में प्रविष्टियाँ लेता था और फिर इस तरह के फंड को सह-आरोपी राजकुमारी (वीरेंद्र कुमार राम की पत्नी) और गेंदा राम (वीरेंद्र कुमार राम के पिता) के बैंक खातों में स्थानांतरित कर देता था। इसके अलावा, यह भी पता चला है कि जाली दस्तावेजों के आधार पर (दिल्ली में) खोले गए कुछ बैंक खातों का भी इस्तेमाल फंड के इस तरह के मार्ग में किया जा रहा था।

63. अभियोजन पक्ष की शिकायत के पैरा 5.2 के अनुसार 21.02.2023 को की गई तलाशी के दौरान विभिन्न अभिलेख, दस्तावेज, डिजिटल डिवाइस, नकदी, आभूषण, वाहन बरामद किए गए और जब्त किए गए। केस रिकॉर्ड से पता चलता है कि यह याचिकाकर्ता ही था जिसने अपने कर्मचारियों की मदद से मनी लॉन्ड्रिंग के अपराध को अंजाम देने में मुख्य आरोपी वीरेंद्र कुमार राम की मदद की थी। अपराध की आय को फर्जी नामों या कंपनियों द्वारा खोले गए विभिन्न बैंक खातों में जमा करके और बाद में दाग मिटाने के लिए मुख्य आरोपी के रिश्तेदारों के बैंक खातों में पैसे ट्रांसफर करके। प्रवर्तन निदेशालय द्वारा एकत्र की गई सामग्री का भी खंडन नहीं किया गया था, जो प्रथम दृष्टया कथित अपराध में याचिकाकर्ता की संलिप्तता को दर्शाता है। यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता एक चार्टर्ड अकाउंटेंट है और वह अवैध तरीकों से प्राप्त धन को डायवर्ट करता था।

64. आधार यह लिया गया है कि जब जांच पूरी हो गई है तो फिर याचिकाकर्ता को क्यों गिरफ्तार किया जाए। अपने तर्क को मजबूत करने के लिए, **सतेंद्र कुमार अंतिल बनाम सीबीआई और अन्य** (सुप्रा) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए फैसले का संदर्भ दिया गया है।

65. माननीय सर्वोच्च न्यायालय की बड़ी पीठ ने **विजय मदनलाल चौधरी एवं अन्य बनाम यूनियन ऑफ इंडिया एवं अन्य** (सुप्रा) में अग्रिम जमानत के मुद्दे पर विचार करते समय माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पी. चिदंबरम बनाम प्रवर्तन निदेशालय, (2019) 9 एससीसी 24 में दिए गए निर्णय की सहायता ली है, जिसमें पैराग्राफ-409 में यह देखा गया है जो इस प्रकार है:

> **"409.** पी. चिदंबरम मामले में, इस न्यायालय ने माना कि आर्थिक अपराधों में अग्रिम जमानत की शक्ति का संयम से प्रयोग किया जाना चाहिए और इस प्रकार माना:
>
> > **"77.** सिद्धराम सतलिंगप्पा म्हेत्रे और अन्य निर्णयों का हवाला देते हुए और यह देखते हुए कि अग्रिम जमानत केवल असाधारण परिस्थितियों में ही दी जा सकती है, जय प्रकाश सिंह बनाम बिहार राज्य में, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार माना: (एससीसी पृष्ठ 386, पैरा 19)
> >
> > **"19.** किसी गंभीर अपराध में अग्रिम जमानत देने के लिए मापदंडों को पूरा किया जाना आवश्यक है और साथ ही ऐसी राहत देते समय न्यायालय को इसके कारणों को दर्ज करना चाहिए। अग्रिम जमानत केवल असाधारण परिस्थितियों में दी जा सकती है, जब न्यायालय को प्रथम दृष्टया यह लगता है कि आवेदक को अपराध में गलत तरीके से फंसाया गया है और वह अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग नहीं करेगा। (देखें डी.के. गणेश बाबू बनाम पी.टी. मनोकरन, महाराष्ट्र राज्य बनाम मोहम्मद साजिद हुसैन मोहम्मद एस. हुसैन और भारत संघ बनाम पदम नारायण अग्रवाल)
> >
> > **<u>आर्थिक अपराध</u>**
> >
> > **78.** धारा 438 सीआरपीसी के तहत शक्ति एक असाधारण उपाय है, जिसका प्रयोग संयम से किया जाना चाहिए; खासकर आर्थिक अपराधों के मामलों में। आर्थिक अपराध एक अलग वर्ग के रूप में खड़े हैं क्योंकि वे समाज के आर्थिक ताने-बाने को प्रभावित करते हैं। प्रवर्तन निदेशालय बनाम अशोक कुमार जैन में, यह माना गया कि आर्थिक अपराधों में, अभियुक्त अग्रिम जमानत का हकदार नहीं है।
> >
> > **83. जांच के चरण में अग्रिम जमानत देने से जांच एजेंसी को आरोपी से पूछताछ करने और उपयोगी जानकारी तथा छिपाई गई सामग्री एकत्र करने में बाधा आ सकती है। यदि आरोपी को पता है कि वह न्यायालय के आदेश**

से सुरक्षित है तो ऐसी पूछताछ में सफलता नहीं मिल पाएगी। विशेष रूप से आर्थिक अपराधों में अग्रिम जमानत देने से निश्चित रूप से प्रभावी जांच में बाधा आएगी। प्रतिवादी प्रवर्तन निदेशालय द्वारा एकत्र की गई सामग्री तथा जांच के चरण को देखते हुए हमारा मानना है कि अग्रिम जमानत देने के लिए यह उपयुक्त मामला नहीं है।

84. मनी लॉन्ड्रिंग के ऐसे मामले में, जिसमें "प्लेसमेंट", "लेयरिंग यानी मूल स्रोत को छिपाने के लिए अन्य संस्थानों में धन का स्थानांतरण" और "पूछताछ यानी विभिन्न परिसंपत्तियों को प्राप्त करने के लिए धन का उपयोग" जैसे कई चरण शामिल हैं, इसमें व्यवस्थित और विश्लेषण की गई जांच की आवश्यकता होती है, जो बहुत फायदेमंद होगी। जैसा कि अनिल शर्मा में माना गया है, ऐसी पूछताछ में सफलता नहीं मिल पाएगी, अगर आरोपी को पता हो कि उसे गिरफ्तारी से पहले जमानत के आदेश से सुरक्षा मिली हुई है। धारा 438 सीआरपीसी केवल असाधारण मामलों में लागू की जानी चाहिए, जहां कथित मामला तुच्छ या निराधार हो। इस मामले में, अपराध की आय को लूटने के आरोप हैं। प्रवर्तन निदेशालय का दावा है कि उसे विदेशी बैंकों सहित विभिन्न स्रोतों से कुछ विशिष्ट इनपुट मिले हैं। कहा जाता है कि अनुरोध पत्र भी जारी किया गया है और विभाग को कुछ जवाब भी मिले हैं। आरोपों की प्रकृति और जांच के चरण को ध्यान में रखते हुए, हमारे विचार में, जांच एजेंसी को जांच की प्रक्रिया में पर्याप्त स्वतंत्रता दी जानी चाहिए। यद्यपि हम प्रवर्तन निदेशालय द्वारा प्रस्तुत नोट को निकालने में विद्वान एकल न्यायाधीश के दृष्टिकोण का समर्थन नहीं करते हैं, लेकिन हमें आरोपित आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई आधार नहीं मिलता है। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए, हमारे विचार में, अपीलकर्ता को अग्रिम जमानत देने से जांच में बाधा आएगी और यह अपीलकर्ता को अग्रिम जमानत देने के लिए विवेकाधिकार का प्रयोग करने के लिए उपयुक्त मामला नहीं है।

(जोर दिया गया)

66. **पी. चिदंबरम बनाम प्रवर्तन निदेशालय** (सुप्रा) के मामले में किए गए संदर्भ से यह स्पष्ट है, जिसे माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **विजय मदनलाल चौधरी और अन्य बनाम यूनियन ऑफ इंडिया और अन्य** (सुप्रा) में ध्यान में रखा है, जिसमें आर्थिक अपराध के मामले में सीआरपीसी की धारा 438 के तहत गिरफ्तारी से पहले जमानत पर विचार करने के लिए लागू किए जाने वाले सिद्धांत को भी उक्त निर्णय के पैराग्राफ-84 में निपटाया गया है। मनी लॉन्ड्रिंग के मामले में विशेष शर्त रखी गई है, जहां इसमें "प्लेसमेंट", "लेयरिंग यानी मूल को छिपाने के लिए अन्य संस्थानों में धन स्थानांतरित करना" और "पूछताछ यानी विभिन्न संपत्तियों को हासिल करने के लिए

धन का उपयोग करना" के कई चरण शामिल हैं, इसके लिए व्यवस्थित और विश्लेषण की जांच की आवश्यकता होती है जो बहुत फायदेमंद होगी।

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने राज्य प्रतिनिधि **सीबीआई बनाम अनिल शर्मा, (1997) 7 एससीसी 187** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय का संदर्भ देते हुए यह माना है कि यदि अभियुक्त को पता है कि वह गिरफ्तारी-पूर्व जमानत आदेश द्वारा संरक्षित है, तो ऐसी पूछताछ में सफलता नहीं मिलेगी।

धारा 438 सीआरपीसी का प्रयोग केवल अपवादस्वरूप मामलों में किया जाना चाहिए, जहां आरोपित मामला तुच्छ या निराधार हो। **पी. चिदंबरम बनाम प्रवर्तन निदेशालय** (सुप्रा) में दिए गए निर्णय के पैराग्राफ-83 और 84 का संदर्भ लिया जा सकता है, जैसा कि ऊपर उद्धृत और संदर्भित किया गया है।

67. इसके अलावा, यहां यह उल्लेख करना आवश्यक है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **पवना डिब्बर बनाम प्रवर्तन निदेशालय** के मामले में **आपराधिक अपील संख्या 2779/2023** में पारित आदेश में अधिनियम, 2002 की धारा 3 को ध्यान में रखते हुए अपीलकर्ता को अभियुक्त के रूप में नहीं दिखाए जाने के प्रभाव पर विचार किया है।

68. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अधिनियम, 2002 की धारा 3 के प्रावधान की व्याख्या करते हुए यह निष्कर्ष निकाला है कि धारा 3 को सरलता से पढ़ने पर, जब तक अपराध की आय मौजूद न हो, तब तक कोई भी धन शोधन अपराध नहीं हो सकता है।

अधिनियम 2002 की धारा 2 की उपधारा (1) के खंड (यू) की परिभाषा के आधार पर, जो "अपराध की आय" को परिभाषित करता है, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैराग्राफ-12 में यह देखा है कि पीएमएलए की धारा 2 की उपधारा (1) के खंड (वी) में "संपत्ति" को हर प्रकार की संपत्ति या परिसंपत्तियों के रूप में परिभाषित किया गया है, चाहे वह भौतिक हो या अमूर्त, चल या अचल, मूर्त या अमूर्त। किसी भी संपत्ति को अपराध की आय के रूप में गठित करने के लिए, इसे किसी व्यक्ति द्वारा अनुसूचित अपराध से संबंधित आपराधिक गतिविधि के परिणामस्वरूप प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त किया जाना चाहिए। स्पष्टीकरण स्पष्ट करता है कि अपराध की आय में न केवल अनुसूचित अपराध से प्राप्त या प्राप्त की गई संपत्ति शामिल है, बल्कि कोई भी संपत्ति भी शामिल है जो अनुसूचित अपराध से संबंधित किसी भी आपराधिक गतिविधि के परिणामस्वरूप प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त या प्राप्त की जा सकती है। खंड (यू) यह भी स्पष्ट करता है कि ऐसी किसी भी संपत्ति का मूल्य भी अपराध की आय होगी। इस प्रकार,

पीएमएलए की धारा 3 के तहत अपराध के लिए "अपराध की आय" का अस्तित्व अनिवार्य है।

पैराग्राफ-13 में, यह देखा गया है कि पीएमएलए की धारा 2 की उपधारा (1) का खंड (x) "अनुसूची" को परिभाषित करता है। इसका खंड (y) "अनुसूचित अपराध" को परिभाषित करता है, जिसे ऊपर उद्धृत और संदर्भित किया गया है।

पैरा-14 में, **विजय मदनलाल चौधरी एवं अन्य बनाम यूनियन ऑफ इंडिया एवं अन्य** (सुप्रा) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय का हवाला देते हुए यह टिप्पणी की गई है कि अपराध की आय के अस्तित्व के लिए पूर्व शर्त अनुसूचित अपराध का अस्तित्व है।

पैराग्राफ-15 में यह निष्कर्ष दिया गया है कि अधिनियम, 2002 की धारा 3 को सरलता से पढ़ने पर, धारा 3 के अंतर्गत अपराध अनुसूचित अपराध के किए जाने के पश्चात किया जा सकता है। उदाहरण देकर यह स्पष्ट किया गया है कि यदि कोई व्यक्ति जो अनुसूचित अपराध से संबंधित नहीं है, जानबूझकर अपराध की आय को छिपाने में सहायता करता है या जानबूझकर अपराध की आय के उपयोग में सहायता करता है, तो उस स्थिति में उसे पीएमएलए की धारा 3 के अंतर्गत अपराध करने का दोषी ठहराया जा सकता है।

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने एक उदाहरण देकर यह भी स्पष्ट किया है कि आईपीसी की धारा 384 से 389 के अंतर्गत जबरन वसूली से संबंधित अपराध पीएमएलए की अनुसूची के पैराग्राफ 1 में शामिल अनुसूचित अपराध हैं।

कोई अभियुक्त भारतीय दंड संहिता की धारा 384 से 389 के अंतर्गत आने वाले जबरन वसूली का अपराध कर सकता है और धन उगाही कर सकता है। इसके बाद, जबरन वसूली के अपराध से असंबद्ध कोई व्यक्ति जबरन वसूली की आय को छिपाने में उक्त अभियुक्त की सहायता कर सकता है। ऐसे मामले में, जो व्यक्ति जबरन वसूली के अपराध की आय को छिपाने के लिए अनुसूचित अपराध में अभियुक्त की सहायता करता है, वह धन शोधन के अपराध का दोषी हो सकता है। इसलिए, यह आवश्यक नहीं है कि जिस व्यक्ति के खिलाफ पीएमएलए की धारा 3 के तहत अपराध का आरोप लगाया गया है, उसे अनुसूचित अपराध में अभियुक्त के रूप में दिखाया गया हो। विजय मदनलाल चौधरी के मामले में इस न्यायालय के निर्णय के पैराग्राफ 270 में जो कहा गया है, वह उपरोक्त निष्कर्ष का समर्थन करता है। पीएमएलए की धारा 3 के तहत अपराध को आकर्षित करने के लिए पूर्व शर्तें यह हैं कि एक अनुसूचित अपराध होना चाहिए और पीएमएलए की धारा 3 की उपधारा (1)

के खंड (यू) में परिभाषित अनुसूचित अपराध के संबंध में अपराध की आय होनी चाहिए।

त्वरित संदर्भ के लिए, **पवना डिब्बर बनाम प्रवर्तन निदेशालय** (सुप्रा) के मामले में दिए गए निर्णय के पैराग्राफ-12, 13, 14, 15 इस प्रकार हैं:

> **"12.** पीएमएलए की धारा 2 की उपधारा (1) के खंड (v) में "संपत्ति" का अर्थ किसी भी प्रकार की संपत्ति या आस्तियों से है, चाहे वह भौतिक हो या अमूर्त, चल या अचल, मूर्त या अमूर्त। किसी भी संपत्ति को अपराध की आय के रूप में गठित करने के लिए, इसे किसी व्यक्ति द्वारा अनुसूचित अपराध से संबंधित आपराधिक गतिविधि के परिणामस्वरूप प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त किया जाना चाहिए। स्पष्टीकरण स्पष्ट करता है कि अपराध की आय में न केवल अनुसूचित अपराध से प्राप्त या प्राप्त की गई संपत्ति शामिल है, बल्कि कोई भी संपत्ति भी शामिल है जो अनुसूचित अपराध से संबंधित किसी भी आपराधिक गतिविधि के परिणामस्वरूप प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त या प्राप्त की जा सकती है। खंड (यू) यह भी स्पष्ट करता है कि ऐसी किसी भी संपत्ति का मूल्य भी अपराध की आय होगी। इस प्रकार, पीएमएलए की धारा 3 के तहत अपराध के लिए "अपराध की आय" का अस्तित्व अनिवार्य है।
>
> **13.** पीएमएलए की धारा 2 की उपधारा (1) का खंड (x) "अनुसूची" को परिभाषित करता है। इसका खंड (y) "अनुसूचित अपराध" को परिभाषित करता है, जो इस प्रकार है:
>
> **"2.** परिभाषा - (1) इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो,
>
> (y) "अनुसूचित अपराध" से तात्पर्य है-
>
> i. अनुसूची के भाग ए के अंतर्गत निर्दिष्ट अपराध; या
>
> ii. अनुसूची के भाग बी के अंतर्गत निर्दिष्ट अपराध यदि ऐसे अपराधों में शामिल कुल मूल्य एक करोड़ रुपये या उससे अधिक है; या
>
> iii. अनुसूची के भाग सी के अंतर्गत निर्दिष्ट अपराध।"
>
> **14.** अपराध की आय के अस्तित्व के लिए पूर्व शर्त अनुसूचित अपराध का अस्तित्व है। इस पहलू पर, **विजय मदनलाल चौधरी** के मामले में इस न्यायालय के निर्णय का संदर्भ लेना आवश्यक है। उक्त निर्णय के पैराग्राफ 253 में, इस न्यायालय ने इस प्रकार माना:
>
> **"253.** संक्षेप में कहें तो, केवल ऐसी संपत्ति ही अपराध की आय मानी जा सकती है जो किसी अनुसूचित अपराध से संबंधित आपराधिक गतिविधि के परिणामस्वरूप प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त की गई

हो। 2002 अधिनियम के तहत अधिकारी किसी भी व्यक्ति के खिलाफ मनी लॉन्ड्रिंग के लिए कार्रवाई नहीं कर सकते हैं, यह मानकर कि उनके द्वारा बरामद की गई संपत्ति अपराध की आय है और अनुसूचित अपराध किया गया है, जब तक कि वह अधिकार क्षेत्र वाली पुलिस के पास पंजीकृत न हो या सक्षम फोरम के समक्ष शिकायत के माध्यम से जांच लंबित न हो। क्योंकि, "व्युत्पन्न या प्राप्त" अभिव्यक्ति पहले से ही किए गए अनुसूचित अपराध से संबंधित आपराधिक गतिविधि का संकेत है। इसी प्रकार, यदि अनुसूचित अपराध से संबंधित आपराधिक गतिविधि में नामित व्यक्ति को किसी सक्षम न्यायालय द्वारा बरी किए जाने, दोषमुक्त किए जाने अथवा उसके विरुद्ध आपराधिक मामले (अनुसूचित अपराध) को रद्द किए जाने के कारण अंतिम रूप से दोषमुक्त कर दिया जाता है, तो ऐसे व्यक्ति अथवा उसके माध्यम से उक्त अनुसूचित अपराध से संबंधित संपत्ति के संबंध में दावा करने वाले व्यक्ति के विरुद्ध मनी लॉन्ड्रिंग के लिए कोई कार्रवाई नहीं की जा सकती। इस व्याख्या को केवल 2002 अधिनियम के प्रावधानों, विशेष रूप से धारा 2(1)(यू) के साथ धारा 3 के आधार पर ही स्वीकार किया जा सकता है। कोई अन्य दृष्टिकोण अपनाना इन प्रावधानों को फिर से लिखना होगा तथा परिभाषा खंड "अपराध की आय" की स्पष्ट भाषा की अवहेलना करना होगा, जैसा कि अभी तक प्राप्त होता है।" (रेखांकित)

पैराग्राफ 269 और 270 में, इस न्यायालय ने इस प्रकार निर्णय दिया:

"269. 2002 अधिनियम की धारा 3 की भाषा से यह स्पष्ट है कि मनी लॉन्ड्रिंग का अपराध एक स्वतंत्र अपराध है, जो अपराध की आय से जुड़ी प्रक्रिया या गतिविधि के बारे में है, जो किसी अनुसूचित अपराध से संबंधित या उससे संबंधित आपराधिक गतिविधि के परिणामस्वरूप प्राप्त या प्राप्त की गई है। प्रक्रिया या गतिविधि किसी भी रूप में हो सकती है - चाहे वह अपराध की आय को छिपाना, कब्जा करना, अधिग्रहण करना, उपयोग करना हो या इसे बेदाग संपत्ति के रूप में पेश करना हो या ऐसा होने का दावा करना हो। इस प्रकार, अपराध की आय से जुड़ी ऐसी किसी भी प्रक्रिया या गतिविधि में शामिल होना मनी लॉन्ड्रिंग का अपराध माना जाएगा। इस अपराध का अनुसूचित अपराध से संबंधित आपराधिक गतिविधि से कोई लेना-देना नहीं है - सिवाय उस अपराध के परिणामस्वरूप प्राप्त या प्राप्त की गई आय के।

270. यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि ऐसी प्रक्रिया या गतिविधि केवल तभी की जा सकती है जब संपत्ति आपराधिक गतिविधि (अनुसूचित अपराध) के परिणामस्वरूप प्राप्त या प्राप्त की गई हो।

अपराध की आय से जुड़ी प्रक्रिया या गतिविधि में शामिल होना या सहायता करना या उसका हिस्सा बनना मनी लॉन्ड्रिंग का अपराध होगा; और किसी दिए गए तथ्य की स्थिति में ऐसी प्रक्रिया या गतिविधि अनुसूचित अपराध के कमीशन की तारीख और समय पर ध्यान दिए बिना एक सतत अपराध हो सकती है। दूसरे शब्दों में, आपराधिक गतिविधि 2002 अधिनियम के प्रयोजन के लिए अनुसूचित अपराध के रूप में अधिसूचित होने से पहले की गई हो सकती है, लेकिन यदि कोई व्यक्ति सीधे या परोक्ष रूप से अपराध की आय से निपटने में लिप्त है या जारी रखता है, तो इसे अनुसूचित अपराध के रूप में अधिसूचित किए जाने के बाद भी, 2002 अधिनियम के तहत धन शोधन के अपराध के लिए मुकदमा चलाया जा सकता है - अपराध की आय को (पूरी तरह से या आंशिक रूप से) रखने या छिपाने या उस पर कब्जा बनाए रखने या पूरी तरह से समाप्त होने तक उसका उपयोग करने के लिए। धन शोधन का अपराध उस तारीख पर निर्भर या उससे जुडा नहीं है जिस दिन अनुसूचित अपराध या अगर हम ऐसा कह सकते हैं तो पूर्ववर्ती अपराध किया गया है। प्रासंगिक तारीख वह तारीख है जिस दिन व्यक्ति अपराध की ऐसी आय से जुड़ी प्रक्रिया या गतिविधि में लिप्त होता है। ये तत्व मूल प्रावधान (धारा 3, 2013 तक संशोधित तथा 31.7.2019 तक लागू) में अंतर्निहित हैं; तथा इन्हें वित्त (सं. 2) अधिनियम, 2019 के तहत स्पष्टीकरण के माध्यम से केवल स्पष्ट किया गया है। इस प्रकार समझा जा सकता है कि 2019 में सम्मिलित स्पष्टीकरण में खंड (ii) को शामिल करने का कोई महत्व नहीं है, क्योंकि यह धारा 3 के दायरे को बिल्कुल भी परिवर्तित या विस्तारित नहीं करता है।"

(रेखांकित)

15. पीएमएलए की धारा 3 पर वापस आते हुए, इसके सरल अर्थ में, धारा 3 के अंतर्गत अपराध अनुसूचित अपराध किए जाने के पश्चात किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, हम ऐसे व्यक्ति का मामला लेते हैं जो अनुसूचित अपराध से जुड़ा नहीं है, जानबूझकर अपराध की आय को छिपाने में सहायता करता है या जानबूझकर अपराध की आय के उपयोग में सहायता करता है। उस स्थिति में, उसे पीएमएलए की धारा 3 के अंतर्गत अपराध करने का दोषी ठहराया जा सकता है। एक ठोस उदाहरण देने के लिए, आईपीसी की धारा 384 से 389 के अंतर्गत "जबरन वसूली" से संबंधित अपराध पीएमएलए की अनुसूची के पैराग्राफ 1 में शामिल अनुसूचित अपराध हैं। कोई अभियुक्त आईपीसी की धारा 384 से 389 के अंतर्गत आने वाले जबरन वसूली का अपराध कर सकता है और धन उगाही कर सकता है। इसके बाद, जबरन वसूली के अपराध से जुड़ा नहीं कोई व्यक्ति जबरन

> वसूली की आय को छिपाने में उक्त अभियुक्त की सहायता कर सकता है। ऐसे मामले में, वह व्यक्ति जो जबरन वसूली के अपराध की आय को छिपाने के लिए अनुसूचित अपराध में अभियुक्त की सहायता करता है, वह धन शोधन के अपराध का दोषी हो सकता है। इसलिए, यह आवश्यक नहीं है कि जिस व्यक्ति के खिलाफ पी.एम.एल.ए की धारा 3 के तहत अपराध का आरोप लगाया गया है, उसे अनुसूचित अपराध में अभियुक्त के रूप में दिखाया गया हो। विजय मदनलाल चौधरी के मामले में इस न्यायालय के निर्णय के पैराग्राफ 270 में जो कहा गया है, वह उपरोक्त निष्कर्ष का समर्थन करता है। पी.एम.एल.ए की धारा 3 के तहत अपराध को आकर्षित करने के लिए पूर्व शर्तें यह हैं कि एक अनुसूचित अपराध होना चाहिए और पी.एम.एल.ए की धारा 3 की उपधारा (1) के खंड (यू) में परिभाषित अनुसूचित अपराध के संबंध में अपराध की आय होनी चाहिए।

69. उपर्युक्त निर्णय के पैरा-18 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने, अनुसूची की व्याख्या के आधार पर अधिवक्ता की ओर से प्रस्तुत तर्क के आधार पर, यह नोट किया है कि **विजय मदनलाल चौधरी एवं अन्य बनाम यूनियन ऑफ इंडिया एवं अन्य** (सुप्रा) के मामले में, अनुसूची की वैधता को भी चुनौती दी गई थी। उक्त निर्णय के अवलोकन से पता चलता है कि इस न्यायालय को अनुसूची में किसी प्रविष्टि की व्याख्या करने के लिए नहीं कहा गया था, विशेष रूप से अनुसूची में धारा 120बी की प्रविष्टि की। अनुसूची को दी गई चुनौती को उक्त निर्णय के पैरा 453, 454 और 455 में निपटाया गया है। इस न्यायालय के समक्ष तर्क यह था कि छोटे-मोटे अपराधों को भी अनुसूची में शामिल किया गया है, और यहां तक कि समझौता योग्य अपराध भी अनुसूची का हिस्सा हैं। यह प्रस्तुत किया गया कि जिन अपराधों का सीमा-पार प्रभाव नहीं है, उन्हें भी अनुसूची में शामिल किया गया है।

पैराग्राफ-19 में आईपीसी की धारा 120-ए के तहत परिभाषित "आपराधिक साजिश" की परिभाषा पर ध्यान दिया गया है।

पैराग्राफ-20 में यह देखा गया है कि कई अपराध, जो अपराध की आय उत्पन्न कर सकते हैं, अनुसूची में शामिल नहीं किए गए हैं और इसे स्पष्ट करने के लिए, कुछ अपराधों को इसमें संदर्भित किया गया है, जो इस प्रकार हैं:

I. भारतीय दंड संहिता की धारा 263ए, जो फर्जी स्टाम्प बनाने या रखने के अपराध से संबंधित है, अनुसूची का हिस्सा नहीं है;

II. यद्यपि लूट और डकैती से संबंधित धारा 392 से 402 के अंतर्गत दंडनीय अपराधों को अनुसूची के भाग ए में शामिल किया गया है, लेकिन चोरी करने के लिए धारा 379 के अंतर्गत दंडनीय अपराध और आवासीय गृह में चोरी करने के लिए धारा 380 के अंतर्गत दंडनीय अपराध अनुसूची के भाग ए और बी का हिस्सा नहीं बनाए गए हैं। दोनों श्रेणियों की चोरी बहुत

बड़ी राशि की हो सकती है जो करोड़ों में हो सकती है। उक्त दोनों अपराध अनुसूची के भाग सी के खंड (3) के आधार पर तभी अनुसूचित अपराध बनते हैं जब अपराधों के सीमा पार निहितार्थ हों;

III. संपत्ति के बेईमानी से दुरुपयोग के लिए धारा 403 के अंतर्गत दंडनीय अपराध अनुसूची का हिस्सा नहीं बनता है। उक्त अपराध अनुसूची के भाग सी के खंड (3) के आधार पर अनुसूचित अपराध तभी बनता है, जब अपराध के सीमा-पार निहितार्थ हों;

IV. धारा 405 के अंतर्गत आपराधिक विश्वासघात का अपराध, जो धारा 406 के अंतर्गत दंडनीय है, अनुसूची का भाग नहीं है। उक्त अपराध अनुसूची के भाग सी के खंड (3) के आधार पर अनुसूचित अपराध तभी बनता है, जब अपराध के सीमा-पार निहितार्थ हों;

V. यद्यपि धारा 417 के अंतर्गत धोखाधड़ी के अपराध को अनुसूचित अपराध बनाया गया है, परंतु धारा 468 के अंतर्गत धोखाधड़ी के प्रयोजनों के लिए जालसाजी का अधिक कठोर अपराध अनुसूची का भाग नहीं है, और

VI. यद्यपि मुद्रा नोटों की जालसाजी या जालसाजी से संबंधित धारा 489ए से 489सी के अंतर्गत अपराध अनुसूची का भाग हैं, परंतु मुद्रा नोटों की जालसाजी या जालसाजी के लिए उपकरण या सामग्री बनाने या रखने का धारा 489डी के अंतर्गत अपराध अनुसूची का भाग नहीं है।

पैराग्राफ-21 में, अनुसूची के भाग-बी में आते हुए यह देखा गया है कि इसमें सीमा शुल्क अधिनियम, 1962 की धारा 132 के तहत केवल एक अपराध शामिल है। सीमा शुल्क अधिनियम की धारा 132 के तहत गलत घोषणा आदि करने का अपराध पी.एम.एल.ए की धारा 2 की उपधारा (1) के खंड (वाई) के उप-खंड (ii) के मद्देनजर तभी अनुसूचित अपराध बनता है, जब अपराध में शामिल कुल मूल्य 1 करोड़ रुपये या उससे अधिक हो। अनुसूची के भाग सी में प्रावधान है कि भाग ए में निर्दिष्ट कोई भी अपराध, जिसका सीमा पार प्रभाव हो, भाग सी का हिस्सा बन जाता है। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि आईपीसी के अध्याय XVII के तहत सीमा पार प्रभाव वाले संपत्ति के खिलाफ सभी अपराध अनुसूचित अपराध बन जाते हैं। जैसा कि पहले बताया गया है, धारा 379 (चोरी), 380 (आवास गृह में चोरी), 403 (संपत्ति का बेईमानी से दुरुपयोग) और 405 (आपराधिक विश्वासघात) के तहत दंडनीय अपराध अध्याय XVII का हिस्सा हैं। हालाँकि उक्त अपराध भाग A में शामिल नहीं हैं, लेकिन वे भाग सी के आधार पर अनुसूचित अपराध बन जाते हैं, यदि उनका सीमा पार प्रभाव हो। इस प्रकार, यह कहा जा सकता है कि अपराध की आय उत्पन्न करने में सक्षम कई अपराध अनुसूची का हिस्सा नहीं बनते हैं।

पैराग्राफ-22 में, विद्वान अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल की ओर से प्रस्तुत तर्क पर यह देखा गया है कि चूंकि आईपीसी की धारा 120 बी अनुसूची के भाग ए में शामिल है, भले ही आरोप किसी ऐसे अपराध को करने के लिए आपराधिक साजिश रचने का हो जो अनुसूची का हिस्सा नहीं है, तो भी अपराध अनुसूचित अपराध बन जाता है, इसलिए आईपीसी के अध्याय XVII के तहत कई अपराध भाग ए और बी में शामिल नहीं हैं। वे तभी अनुसूचित अपराध बनते हैं जब उनके सीमा पार निहितार्थ हों। इस प्रकार, संपत्ति के बेईमानी से दुरुपयोग या आपराधिक विश्वासघात या चोरी के अपराध अनुसूचित अपराध बन सकते हैं, बशर्ते उनके सीमा पार निहितार्थ हों।

पैराग्राफ-23 में यह देखा गया है कि दंडात्मक क़ानूनों की कड़ाई से व्याख्या की जानी चाहिए और दंडात्मक कानूनों की व्याख्या अधिनियम में व्यक्त विधायी मंशा के अनुसार की जानी चाहिए।

पैराग्राफ-24 में यह देखा गया है कि यदि दंडात्मक क़ानून के किसी विशेष प्रावधान की दो उचित व्याख्याएँ दी जा सकती हैं, तो न्यायालय को आम तौर पर ऐसी व्याख्या अपनानी चाहिए जो दंडात्मक परिणामों को लागू करने से बचती हो। दूसरे शब्दों में, दोनों की अधिक उदार व्याख्या अपनाई जानी चाहिए।

पैराग्राफ-25 में यह देखा गया है कि पीएमएलए की धारा 2 की उपधारा (1) के खंड (वाई) के तहत अनुसूचित अपराध की परिभाषा से जो विधायी मंशा समझी जा सकती है, वह यह है कि हर अपराध जो अपराध की आय उत्पन्न कर सकता है, उसे अनुसूचित अपराध नहीं माना जाना चाहिए। इसलिए, केवल कुछ विशिष्ट अपराधों को ही अनुसूची में शामिल किया गया है।

त्वरित संदर्भ के लिए, **पवना डिब्बर बनाम प्रवर्तन निदेशालय** (सुप्रा) में दिए गए निर्णय के पैराग्राफ-18, 19, 20, 21, 22, 23, 24 और 25 इस प्रकार हैं:

> **"18.** अब हम अपीलकर्ता की ओर से पेश विद्वान वरिष्ठ वकील द्वारा अनुसूची की व्याख्या के आधार पर दिए गए तीसरे तर्क पर आते हैं। यहाँ यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि **विजय मदनलाल चौधरी के** मामले में, अनुसूची की वैधता को भी चुनौती दी गई थी। उक्त निर्णय के अवलोकन से पता चलता है कि इस न्यायालय को अनुसूची में किसी भी प्रविष्टि और विशेष रूप से अनुसूची में धारा 120 बी की प्रविष्टि की व्याख्या करने के लिए नहीं कहा गया था। अनुसूची को चुनौती उक्त निर्णय के पैराग्राफ 453, 454 और 455 में निपटाई गई है। इस न्यायालय के समक्ष तर्क यह था कि अनुसूची में छोटे-मोटे अपराध भी शामिल

किए गए हैं और यहां तक कि समझौता योग्य अपराध भी अनुसूची का हिस्सा हैं। यह प्रस्तुत किया गया कि जिन अपराधों का सीमा पार प्रभाव नहीं है, उन्हें अनुसूची में शामिल किया गया है। उक्त निर्णय के पैराग्राफ 454 और 455 में, इस न्यायालय ने इस प्रकार माना:

> **"454.** इस अनुसूची को 2009 के अधिनियम 21, 2013 के अधिनियम 2, 2015 के अधिनियम 22, 2018 के अधिनियम 13 और 2018 के अधिनियम 16 द्वारा संशोधित किया गया है, जिससे अनुसूचित अपराध के रूप में माने जाने वाले नए अपराध सम्मिलित किए गए हैं। चुनौती अनुसूची के अधिनियमन और समय-समय पर किए गए संशोधनों के संबंध में विधायी क्षमता के आधार पर नहीं है। हालाँकि, हमारे सामने यह आग्रह किया गया था कि दृष्टिकोण में कोई स्थिरता नहीं है क्योंकि इसमें मनी लॉन्ड्रिंग के अपराध के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित अपराध के रूप में छोटे अपराध भी शामिल हैं, यहाँ तक कि ऐसे अपराध भी जिनका कोई सीमा पार निहितार्थ नहीं है और जो पक्षों के बीच समझौता योग्य हैं। मनी लॉन्ड्रिंग के अपराध के गठन के लिए उन्हें प्रासंगिक मानने के लिए अपराधों का वर्गीकरण या समूहीकरण विधायी नीति का विषय है। संसद ने अपने विवेक से निर्दिष्ट आपराधिक गतिविधि के परिणामस्वरूप प्राप्त या अर्जित संपत्ति को अनुसूची में उल्लिखित संबंधित कानून के तहत अपराध माना है। तथ्य यह है कि कुछ अपराध संबंधित कानून के तहत असंज्ञेय अपराध हो सकते हैं या उन्हें मामूली और समझौता योग्य अपराध माना जा सकता है, फिर भी संसद ने अपने विवेक से इस तरह की आपराधिक गतिविधियों से उत्पन्न अपराध की आय से संबंधित प्रक्रिया या गतिविधि के संचयी प्रभाव को देश की आर्थिक स्थिरता, संप्रभुता और अखंडता के लिए खतरा माना है और इस प्रकार, इसे मनी लॉन्ड्रिंग के अपराध के रूप में गिनने के लिए उन्हें एक साथ समूहीकृत किया है, जो विधायी नीति का मामला है। न्यायालय के लिए ऐसी नीति पर दोबारा विचार करना खुला नहीं है।
>
> **455.** इस बात को रेखांकित करने की आवश्यकता नहीं है कि 2002 अधिनियम का उद्देश्य मनी लॉन्ड्रिंग गतिविधि के संबंध में कार्रवाई शुरू करना है जो अनिवार्य रूप से किसी व्यक्ति द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से निर्दिष्ट आपराधिक गतिविधि के परिणामस्वरूप प्राप्त या प्राप्त की गई संपत्ति से संबंधित है। इस अधिनियम के तहत अभियोजन स्वयं आपराधिक गतिविधि से संबंधित नहीं है, बल्कि निर्दिष्ट आपराधिक गतिविधि से प्राप्त या प्राप्त की गई संपत्ति तक सीमित है। परिणामस्वरूप, संबंधित कानून के तहत गैर-संज्ञेय, समझौता योग्य या मामूली अपराध के रूप में मानी गई आपराधिक गतिविधि को शामिल

करने से इस मामले का जवाब देने में कोई असर नहीं पड़ना चाहिए। इसमें, मनी लॉन्ड्रिंग का अपराध एक स्वतंत्र अपराध है और इस तरह के अपराध में शामिल व्यक्तियों को इस अधिनियम के तहत अपराधियों के रूप में एक साथ समूहीकृत किया जाता है। जहां तक मनी लॉन्ड्रिंग के अपराध का संबंध है, उनके बीच अंतर करने का कोई कारण नहीं है। इसलिए, हमारी राय में, विचाराधीन तर्क में कोई योग्यता नहीं है।"

इस मामले में, हमें अनुसूची या उसके किसी भाग की वैधता तय करने के लिए नहीं कहा गया है। सवाल यह है कि क्या अनुसूची के पैराग्राफ 1 में शामिल आईपीसी की धारा 120 बी के तहत अपराध को अनुसूचित अपराध माना जा सकता है, भले ही कथित आपराधिक साजिश किसी ऐसे अपराध को अंजाम देने के लिए हो जो अनुसूची का हिस्सा नहीं है। **विजय मदनलाल चौधरी**[1] के मामले में यह मुद्दा विचार के लिए नहीं उठा।

19. आईपीसी की धारा 120 ए "आपराधिक षड्यंत्र" को परिभाषित करती है, जो इस प्रकार है:

"120ए. आपराधिक षड्यंत्र की परिभाषा--जब दो या अधिक व्यक्ति ऐसा करने के लिए सहमत होते हैं, या करवाने का कारण बनते हैं,–

i. कोई गैरकानूनी कार्य, या

ii. ऐसा कार्य जो अवैध नहीं है, अवैध साधनों से, ऐसे समझौते को आपराधिक षडयंत्र माना जाता है:

बशर्ते कि अपराध करने के लिए किए गए समझौते को छोड़कर कोई भी समझौता आपराधिक साजिश नहीं माना जाएगा, जब तक कि समझौते के अलावा कोई कार्य ऐसे समझौते के एक या अधिक पक्षों द्वारा नहीं किया जाता है।

इसके अनुसरण में समझौता

स्पष्टीकरण.- यह बात मायने नहीं रखती कि अवैध कार्य ऐसे समझौते का अंतिम उद्देश्य है या उस उद्देश्य से मात्र आकस्मिक है।

आईपीसी की धारा 120बी में आपराधिक साजिश के लिए सजा का प्रावधान है, जो इस प्रकार है:

"120बी. आपराधिक षडयंत्र की सजा.- (1) जो कोई मृत्यु, आजीवन कारावास या दो वर्ष या उससे अधिक की अवधि के

कठोर कारावास से दंडनीय अपराध करने के लिए आपराधिक षडयंत्र में पक्षकार है, जहां इस संहिता में ऐसे षडयंत्र की सजा के लिए कोई स्पष्ट प्रावधान नहीं किया गया है, उसे उसी तरह से दंडित किया जाएगा जैसे कि उसने ऐसे अपराध को उकसाया हो।

(2) जो कोई भी पूर्वोक्त दंडनीय अपराध करने के लिए आपराधिक षडयंत्र के अलावा किसी अन्य आपराधिक षडयंत्र में पक्षकार होगा, उसे छह महीने से अधिक अवधि के कारावास या जुर्माने या दोनों से दंडित किया जाएगा।

20. अब हम पीएमएलए की अनुसूची की ओर मुड़ते हैं। हम पाते हैं कि कई अपराध, जो अपराध की आय उत्पन्न कर सकते हैं, अनुसूची में शामिल नहीं किए गए हैं। हम केवल उदाहरण के तौर पर ऐसे कुछ अपराधों का उल्लेख कर रहे हैं:

I. आईपीसी की धारा 263ए, जो काल्पनिक स्टाम्प बनाने या रखने के अपराध से संबंधित है, अनुसूची का हिस्सा नहीं है;

II. यद्यपि लूट और डकैती से संबंधित धारा 392 से 402 के अंतर्गत दंडनीय अपराधों को अनुसूची के भाग ए में शामिल किया गया है, लेकिन चोरी करने के लिए धारा 379 के अंतर्गत दंडनीय अपराध और आवासीय गृह में चोरी करने के लिए धारा 380 के अंतर्गत दंडनीय अपराध को अनुसूची के भाग ए और बी का हिस्सा नहीं बनाया गया है। दोनों श्रेणियों की चोरी बहुत बड़ी राशि की हो सकती है जो करोड़ों में हो सकती है। उक्त दोनों अपराध अनुसूची के भाग सी के खंड (3) के आधार पर तभी अनुसूचित अपराध बनते हैं जब अपराधों के सीमा पारीय निहितार्थ हों;

III. धारा 403 के अंतर्गत संपत्ति के बेईमानी से दुरुपयोग का दंडनीय अपराध अनुसूची का हिस्सा नहीं है। उक्त अपराध अनुसूची के भाग सी के खंड (3) के आधार पर तभी अनुसूचित अपराध बनता है जब अपराध के सीमा पार निहितार्थ हों;

IV. धारा 405 के अंतर्गत आपराधिक विश्वासघात का अपराध, जो धारा 406 के अंतर्गत दंडनीय है, अनुसूची का भाग नहीं है। उक्त अपराध अनुसूची के भाग सी के खंड (3) के आधार पर अनुसूचित अपराध तभी बनता है, जब अपराध के सीमापार निहितार्थ हों;

V. यद्यपि धारा 417 के तहत धोखाधड़ी के अपराध को अनुसूचित अपराध बनाया गया है, लेकिन धारा 468 के तहत धोखाधड़ी के

उद्देश्य से जालसाजी का अधिक कठोर अपराध अनुसूची का हिस्सा नहीं है।

VI. यद्यपि मुद्रा नोटों की जालसाजी या जालसाजी से संबंधित धारा 489ए से 489सी के अंतर्गत अपराध अनुसूची का हिस्सा हैं, लेकिन मुद्रा नोटों की जालसाजी या जालसाजी के लिए उपकरण या सामग्री बनाने या रखने से संबंधित धारा 489डी के अंतर्गत अपराध अनुसूची का हिस्सा नहीं है।

21. अब अनुसूची के भाग बी पर आते हैं, इसमें सीमा शुल्क अधिनियम, 1962 की धारा 132 के तहत केवल एक अपराध शामिल है। सीमा शुल्क अधिनियम की धारा 132 के तहत गलत घोषणा करना आदि अपराध पीएमएलए की धारा 2 की उपधारा (1) के खंड (वाई) के उपखंड (ii) के मद्देनजर तभी अनुसूचित अपराध बन जाता है, जब अपराध में शामिल कुल मूल्य 1 करोड़ रुपये या उससे अधिक हो। अनुसूची के भाग सी में प्रावधान है कि भाग ए में निर्दिष्ट कोई भी अपराध, जिसके सीमा पार निहितार्थ हैं, भाग सी का हिस्सा बन जाता है। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि आईपीसी के अध्याय XVII के तहत संपत्ति के खिलाफ सभी अपराध, जिनके सीमा पार निहितार्थ हैं, अनुसूचित अपराध बन जाते हैं। जैसा कि पहले बताया गया है, धारा 379 (चोरी), 380 (आवास गृह में चोरी), 403 (संपत्ति का बेईमानी से दुरुपयोग) और 405 (आपराधिक विश्वासघात) के तहत दंडनीय अपराध अध्याय XVII का हिस्सा हैं। हालाँकि उक्त अपराध भाग A में शामिल नहीं हैं, लेकिन वे भाग सी के आधार पर अनुसूचित अपराध बन जाते हैं, यदि उनका सीमा पार प्रभाव हो। इस प्रकार, यह कहा जा सकता है कि अपराध की आय उत्पन्न करने में सक्षम कई अपराध अनुसूची का हिस्सा नहीं बनते हैं।

22. विद्वान अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल ने तर्क दिया कि चूंकि आईपीसी की धारा 120बी अनुसूची के भाग ए में शामिल है, भले ही आरोप किसी ऐसे अपराध को करने के लिए आपराधिक साजिश रचने का हो जो अनुसूची का हिस्सा नहीं है, तो भी अपराध अनुसूचित अपराध बन जाता है। जैसा कि पहले कहा गया है, आईपीसी के अध्याय XVII के तहत कई अपराध भाग ए और बी में शामिल नहीं हैं। वे तभी अनुसूचित अपराध बनते हैं जब उनके सीमा पार निहितार्थ हों। इस प्रकार, संपत्ति के बेईमानी से दुरुपयोग या आपराधिक विश्वासघात या चोरी के अपराध अनुसूचित अपराध बन सकते हैं, बशर्ते उनके सीमा पार निहितार्थ हों। यदि विद्वान अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल का तर्क स्वीकार कर लिया जाता है, तो यदि धारा 403 या धारा 405 के तहत अपराध करने की साजिश है, हालांकि उनका कोई सीमा पार निहितार्थ नहीं है, धारा 403

और 405 के तहत अपराध करने की साजिश का धारा 120बी के तहत अपराध अनुसूचित अपराध बन जाएगा। इस प्रकार, यदि कोई अपराध अनुसूची के भाग ए, बी और सी में शामिल नहीं है, लेकिन यदि अपराध करने की साजिश का आरोप लगाया जाता है, तो वह अनुसूचित अपराध बन जाएगा। सीमा शुल्क अधिनियम की धारा 132 के तहत दंडनीय अपराध को भाग बी के तहत अनुसूचित अपराध बनाया जाता है, बशर्ते कि अपराध में शामिल मूल्य एक करोड़ रुपये या उससे अधिक हो। लेकिन अगर आईपीसी की धारा 120 बी लागू होती है, तो एक लाख रुपये का भी अपराध करने वाले को पीएमएलए के दायरे में लाया जा सकता है। उस तर्क से, किसी भी दंड कानून के तहत कोई भी अपराध करने की साजिश जो आय उत्पन्न करने में सक्षम है, उसे आईपीसी की धारा 120 बी लागू करके अनुसूचित अपराध में परिवर्तित किया जा सकता है, भले ही वह अपराध अनुसूची का हिस्सा न हो। यह विधायिका का इरादा नहीं हो सकता है।

23. दंड विधानों की व्याख्या सख्ती से की जानी चाहिए। यह सच है कि दंड विधानों की व्याख्या विधायी मंशा के अनुसार की जानी चाहिए जैसा कि अधिनियम में व्यक्त किया गया है। जीपी सिंह के वैधानिक व्याख्या के सिद्धांतों (15वें संस्करण) के अध्याय 1 में यह देखा गया है कि:

> **"इस प्रकार, विधानमंडल की मंशा दो पहलुओं को आत्मसात करती है: एक पहलू में यह "अर्थ" की अवधारणा को वहन करती है, यानी शब्दों का क्या अर्थ है और दूसरे पहलू में, यह "उद्देश्य और लक्ष्य" या "कारण और भावना" की अवधारणा को व्यक्त करती है जो क़ानून में व्याप्त है। इसलिए, निर्माण की प्रक्रिया शाब्दिक और उद्देश्यपूर्ण दोनों दृष्टिकोणों को जोड़ती है।** दूसरे शब्दों में, विधायी इरादा, यानी, किसी अधिनियम का सही या कानूनी अर्थ अधिनियम में प्रयुक्त शब्दों के अर्थ पर विचार करके किसी भी स्पष्ट उद्देश्य या वस्तु के प्रकाश में प्राप्त होता है जो उस शरारत और उसके उपाय को समझता है जिसके लिए अधिनियम निर्देशित है।" ए ड्रिजर के शब्दों में, क़ानून का निर्माण, दूसरा संस्करण, 1983: **किसी अधिनियम के शब्दों को उसके संपूर्ण संदर्भ में तथा उसके व्याकरणिक और सामान्य अर्थ में अधिनियम की योजना, अधिनियम के उद्देश्य और संसद के इरादे के साथ सामंजस्यपूर्ण ढंग से पढ़ा जाना चाहिए**। इस सूत्रीकरण को बाद में सर्वोच्च न्यायालय की स्वीकृति मिली और इसे "निर्माण का प्रमुख सिद्धांत" कहा गया।" संवैधानिक और वैधानिक व्याख्या दोनों में, न्यायालय को कानून के व्यक्तिपरक और वस्तुनिष्ठ उद्देश्यों के

बीच उचित संबंध निर्धारित करने में विवेक का प्रयोग करना चाहिए और कानून को उसके उद्देश्य को प्राप्त करने में मदद करनी चाहिए।" (महत्व जोड़ा गया)

24. विधानमंडल की मंशा को प्रभावी करते समय, यदि दंड विधान के किसी विशेष प्रावधान की दो उचित व्याख्याएँ की जा सकती हैं, तो न्यायालय को आम तौर पर ऐसी व्याख्या अपनानी चाहिए जो दंडात्मक परिणामों के आरोपण से बचती हो। दूसरे शब्दों में, दोनों की अधिक उदार व्याख्या अपनाई जानी चाहिए।

25. पी.एम.एल.ए की धारा 2 की उपधारा (1) के खंड (वाई) के तहत अनुसूचित अपराध की परिभाषा से जो विधायी मंशा समझी जा सकती है, वह यह है कि हर अपराध जो अपराध की आय उत्पन्न कर सकता है, उसे अनुसूचित अपराध नहीं माना जाना चाहिए। इसलिए, केवल कुछ विशिष्ट अपराधों को ही अनुसूची में शामिल किया गया है। इस प्रकार, यदि विद्वान अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल के प्रस्तुतियाँ स्वीकार कर ली जाती हैं, तो अनुसूची अर्थहीन या निरर्थक हो जाएगी। इसका कारण यह है कि यदि पंजीकृत अपराध अनुसूचित अपराध नहीं भी है, तो भी पीएमएलए के प्रावधान और विशेष रूप से धारा 3 को केवल धारा 120बी लागू करके लागू किया जाएगा। यदि हम धारा 120बी को देखें, तो केवल इसलिए कि अपराध करने की साजिश है, वह गंभीर अपराध नहीं बन जाती। इसका उद्देश्य अपराध करने की साजिश में शामिल लोगों को दंडित करना है, भले ही उन्होंने कोई ऐसा प्रत्यक्ष कार्य न किया हो जो अपराध का गठन करता हो। षड्यंत्र, अभियुक्तों के बीच अपराध करने के लिए एक समझौता है। यदि हम धारा 120बी के तहत दिए गए दंडों को देखें, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि यह कोई गंभीर अपराध नहीं है। इसमें केवल प्रतिनिधिक उत्तरदायित्व के सिद्धांत को शामिल किया गया है। यदि किसी विशेष अपराध को करने के लिए षड्यंत्र के लिए क़ानून में कोई विशिष्ट दंड प्रदान नहीं किया गया है, तो धारा 120बी मुख्य अभियुक्त के षड्यंत्रकारी को दंड लगाने के उद्देश्य से दुष्प्रेरक के रूप में मानती है। ईडी द्वारा सुझाई गई व्याख्या केवल कुछ चुनिंदा अपराधों को अनुसूचित अपराध बनाने के विधायी उद्देश्य को विफल कर देगी। यदि हम ऐसी व्याख्या को स्वीकार करते हैं, तो क़ानून स्पष्ट रूप से मनमाना होने के कारण असंवैधानिकता के दोष को आकर्षित कर सकता है। विधायिका का यह इरादा नहीं हो सकता कि धारा 120बी लागू करके अनुसूची में शामिल न किए गए हर अपराध को अनुसूचित अपराध बना दिया जाए। इसलिए, हमारे विचार में, अनुसूची के भाग ए में शामिल आईपीसी की धारा 120 बी के तहत अपराध तभी अनुसूचित अपराध बन

जाएगा जब आपराधिक साजिश अनुसूची के भाग ए, बी या सी में पहले से शामिल किसी अपराध को अंजाम देने की हो। दूसरे शब्दों में, आईपीसी की धारा 120 बी के तहत दंडनीय अपराध तभी अनुसूचित अपराध बन जाएगा जब कथित साजिश किसी ऐसे अपराध को अंजाम देने की हो जो अन्यथा अनुसूचित अपराध है।

निष्कर्ष पैराग्राफ-27 पर पहुंचा गया है जो इस प्रकार है:

"27. जबकि हम अपीलकर्ता की ओर से पेश विद्वान वरिष्ठ वकील द्वारा प्रस्तुत पहले और दूसरे प्रस्तुतीकरण को अस्वीकार करते हैं, तीसरे प्रस्तुतीकरण को बरकरार रखा जाना चाहिए। हमारे निष्कर्ष हैं:

i) यह आवश्यक नहीं है कि जिस व्यक्ति के विरुद्ध पीएमएलए की धारा 3 के अंतर्गत अपराध का आरोप लगाया गया हो, उसे अनुसूचित अपराध में अभियुक्त के रूप में दर्शाया गया हो;

ii) यदि पीएमएलए के तहत शिकायत में दर्शाया गया कोई आरोपी अनुसूचित अपराध में आरोपी नहीं है, तो भी उसे अनुसूचित अपराध में सभी आरोपियों के बरी होने या अनुसूचित अपराध में सभी आरोपियों के बरी होने से लाभ मिलेगा। इसी तरह, उसे अनुसूचित अपराध की कार्यवाही को रद्द करने के आदेश का लाभ मिलेगा;

iii) पहली संपत्ति का अपराध की आय से कोई संबंध नहीं माना जा सकता क्योंकि अनुसूचित अपराध बनाने वाले कृत्य संपत्ति अर्जित किए जाने के बाद किए गए थे;

iv) यह मुद्दा कि क्या अपीलकर्ता ने अपराध की आय का हिस्सा बनने वाले दागी धन का उपयोग दूसरी संपत्ति हासिल करने के लिए किया है, केवल परीक्षण के समय ही तय किया जा सकता है; और

v) आईपीसी की धारा 120बी के तहत दंडनीय अपराध तभी अनुसूचित अपराध बन जाएगा जब कथित साजिश किसी ऐसे अपराध को करने की हो जो विशेष रूप से अनुसूची में शामिल हो।

70. यह न्यायालय, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **विजय मदनलाल चौधरी एवं अन्य बनाम यूनियन ऑफ इंडिया एवं अन्य** (सुप्रा) तथा **पवना डिब्बर बनाम प्रवर्तन निदेशालय** (सुप्रा) में दिए गए निर्णय के मद्देनजर, जिसमें पैराग्राफ-16 से यह स्पष्ट है कि यदि अनुसूचित अपराध के लिए अभियोजन सभी अभियुक्तों को दोषमुक्त करने या सभी अभियुक्तों को दोषमुक्त करने या अनुसूचित अपराध की कार्यवाही को पूरी तरह से रद्द करने के साथ समाप्त होता है, तो अनुसूचित अपराध अस्तित्व में नहीं रहेगा, और इसलिए, पीएमएलए की धारा 3 के तहत दंडनीय अपराध के लिए किसी पर मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है क्योंकि अपराध की कोई आय नहीं होगी।

इस प्रकार, ऐसे मामले में, जिस आरोपी के खिलाफ पीएमएलए की धारा 3 के तहत शिकायत दर्ज की गई है, उसे अनुसूचित अपराध समाप्त होने से लाभ होगा, क्योंकि सभी आरोपियों को बरी या छुट्टी दे दी गई है। इसी तरह, उसे अनुसूचित अपराध की कार्यवाही को रद्द करने का लाभ मिलेगा। हालांकि, पीएमएलए मामले में एक आरोपी जो अनुसूचित अपराध के बाद अपराध की आय को छिपाने या उपयोग करने में सहायता करके सामने आता है, उसे अनुसूचित अपराध में आरोपी होने की आवश्यकता नहीं है। ऐसे आरोपी पर तब तक पीएमएलए के तहत मुकदमा चलाया जा सकता है जब तक कि अनुसूचित अपराध मौजूद है।

71. दोनों निर्णयों में की गई चर्चा से यह और भी स्पष्ट है जैसा कि **पवना डिब्बर बनाम प्रवर्तन निदेशालय** (सुप्रा) में दिए गए निर्णय के पैराग्राफ-27 से पता चलता है कि यह मुद्दा कि क्या अपीलकर्ता ने अपराध की आय का हिस्सा बनने वाले दागी धन का उपयोग दूसरी संपत्ति अर्जित करने के लिए किया है, केवल परीक्षण के समय ही तय किया जा सकता है।

72. यदि अपराध अनुसूची के भाग-ए और बी में शामिल अपराध के अनुसार सीमा निहितार्थ को पार कर गया है तो अनुसूची के भाग-सी के खंड-3 के आधार पर अपराध अनुसूची अपराध बन जाता है, जबकि अनुसूची के भाग-सी में संदर्भित अपराध अधिनियम, 2002 की धारा 3 के तहत दंडनीय कहा जाएगा यदि अपराध सीमा निहितार्थ को पार कर गया है। यहां यह संदर्भित करने की आवश्यकता है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **पवना डिब्बर बनाम प्रवर्तन निदेशालय** (सुप्रा) में दिया गया निर्णय संबंधित आरोपी व्यक्ति द्वारा सीआरपीसी की धारा 482 के तहत उच्च न्यायालय के अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र का आह्वान करते हुए दायर की गई कार्यवाही को रद्द करने के संबंध में है। अतः उपरोक्त निर्णय में अधिनियम, 2002 के अन्तर्गत किये जाने वाले अपराध के घटक की उपलब्धता की जांच की गई है, जिसमें अधिनियम, 2002 की धारा 3 के अन्तर्गत निहित दण्डात्मक प्रावधान तथा

उसकी अनुसूची के अन्तर्गत सूचीबद्ध अपराधों को ध्यान में रखते हुए उपरोक्त निर्णय पारित किया गया है।

<u>निष्कर्ष:</u>

73. हम यहां अग्रिम जमानत दिए जाने के मुद्दे पर विचार कर रहे हैं और इसलिए, गिरफ्तारी पूर्व जमानत के लिए आवेदन पर विचार करने के सिद्धांत को लागू करते हुए, यदि प्रथम दृष्टया मामला नहीं बनता है तो गिरफ्तारी पूर्व जमानत दिए जाने का आदेश पारित करके विचार किया जाना आवश्यक है।

74. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **केंद्रीय जांच ब्यूरो बनाम संतोष क्रनाणी एवं अन्य, 2023 एससीसी ऑनलाइन एससी 427** के मामले में कहा है कि भ्रष्टाचार हमारे समाज के लिए एक गंभीर खतरा है और इससे सख्ती से निपटा जाना चाहिए। उपरोक्त निर्णय के प्रासंगिक पैराग्राफ का संदर्भ इस प्रकार दिया जा रहा है:-

> **"31.** उच्च न्यायालय को कथित अपराध की प्रकृति और गंभीरता को ध्यान में रखना चाहिए था। भ्रष्टाचार हमारे समाज के लिए एक गंभीर खतरा है और इससे सख्ती से निपटा जाना चाहिए। इससे न केवल सरकारी खजाने को भारी नुकसान होता है, बल्कि सुशासन भी प्रभावित होता है। आम आदमी सामाजिक कल्याण योजनाओं के तहत मिलने वाले लाभों से वंचित रह जाता है और सबसे ज्यादा प्रभावित होता है। यह सही कहा गया है, "भ्रष्टाचार एक ऐसा पेड़ है जिसकी शाखाएँ बहुत लंबी होती हैं; वे हर जगह फैलती हैं और वहाँ से गिरने वाली ओस ने अधिकारियों की कुछ कुर्सियों और स्टूलों को संक्रमित कर दिया है।" इसलिए, अतिरिक्त सचेत रहने की आवश्यकता है।"

75. जांच के दौरान सामने आए उपरोक्त आरोप के आधार पर यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि याचिकाकर्ता की ओर से जो तर्क दिया गया है कि आय को अपराध की आय नहीं कहा जा सकता है, लेकिन जैसा कि पिछले पैराग्राफ से पता चलता है, आरोपी व्यक्ति वीरेंद्र कुमार राम द्वारा प्राप्त धन को इस याचिकाकर्ता ने चार्टर्ड अकाउंटेंट की हैसियत से निवेश किया है, इतना ही नहीं उसने विभिन्न फर्जी खातों से धन निकालकर आरोपी व्यक्तियों के खाते में स्थानांतरित भी किया है।

76. यहाँ, इस मामले में, प्रथम दृष्टया ऐसा प्रतीत होता है कि वर्तमान याचिकाकर्ता वीरेंद्र कुमार राम की संपत्ति/धन को छिपाने और विविधीकरण में शामिल है, जैसा कि ईसीआईआर से पता चलता है, जिसका सीमा पार निहितार्थ है क्योंकि धन को दिल्ली में छिपाया गया और विविधीकरण किया गया, जिसे वीरेंद्र कुमार राम ने झारखंड राज्य के जमशेदपुर में इंजीनियर के रूप में काम करते हुए खरीदा था।

77. याचिकाकर्ता के खिलाफ उपलब्ध उपरोक्त सामग्री के मद्देनजर, यह न्यायालय इस विचार पर है कि इस तरह के गंभीर अपराध में, जो सामग्री के आधार पर उपलब्ध

है, अग्रिम जमानत देने के सिद्धांत को लागू करते हुए, जिसमें प्रथम दृष्टया मामला होने के सिद्धांत का पालन किया जाना है, आरोप की प्रकृति गंभीर है और इस तरह, यह अग्रिम जमानत देने का उपयुक्त मामला नहीं है।

78. उपरोक्त कारणों से, तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, जैसा कि ऊपर विश्लेषण किया गया है, आवेदक जमानत देने की शक्ति के प्रयोग के लिए एक विशेष मामला बनाने में विफल रहा और अग्रिम जमानत के निर्णय के लिए आवश्यक तथ्यों और मापदंडों पर विचार करते हुए, मामले की योग्यता पर टिप्पणी किए बिना, यह न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत अग्रिम जमानत देने के लिए अपने विवेकाधीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने के लिए कोई असाधारण आधार नहीं पाता है। इसलिए, यह न्यायालय इस विचार पर है कि अग्रिम जमानत आवेदन खारिज किए जाने योग्य हैं।

79. यह स्पष्ट किया जाता है कि इस न्यायालय ने मामले के गुण-दोष पर गहनता से विचार नहीं किया है तथा इस आदेश में व्यक्त किए गए विचार केवल प्रथम दृष्टया हैं।

80. तदनुसार, उपर्युक्त चर्चा के आधार पर, यह न्यायालय इस विचार पर है कि तत्काल आवेदन खारिज किए जाने योग्य है और इस प्रकार, खारिज किया जाता है।

81. यदि कोई लंबित अंतरिम आवेदन है तो उसका भी निपटारा किया जाता है।

(न्यायमूर्ति सुजीत नारायण प्रसाद)

झारखण्ड उच्च न्यायालय, रांची
दिनांकित: 16/02/2024
Saurabh /**A.F.R.**

यह अनुवाद सुश्री लीना मुखर्जी, पैनल अनुवादक के द्वारा किया गया।